SMAJIK PADHTIYA G.K.V.

॥ ओ३म् ॥

सामाजिक पद्धतियां

—जिसको—

श्री म० मदनजित् आर्य वैदिक धर्म विशारद

महाशय दी हट्टी, फ़िरोजपुर शहर ने

सर्व साधारण नर-नारियों के

लाभार्थ निर्माण

किया ।
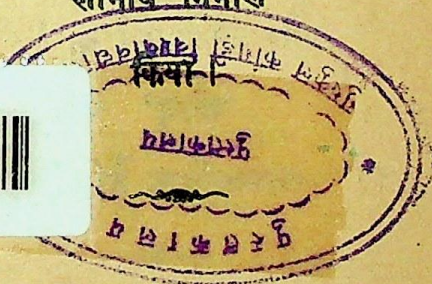
प्रथम संस्करण १००० | सम्वत् २०१० | मूल्य ।)

समर्पण

आर्य समाज के माननीय विद्वान् कई ग्रन्थों के रचयिता गुरुकुल कांगड़ी के एक विख्यात स्नातक अनथक परिश्रम शील कार्यकर्त्ता अध्यक्ष जाति भेद निवारक आर्य परिवार संघ

श्री पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति

—के—

पवित्र कर कमलों में सादर समर्पित।

प्रकाशक :—

मानकचन्द मन्त्री

आर्य प्रतिनिधि सभा जालन्धर (पंजाब)

॥ ओ३म् ॥

प्रस्तावना

श्रीमान् महाशय मदनजित् जी ने यह सामाजिक पद्धति नामक पुस्तिका लिखी है। जिसके आरम्भ में स्तुति, प्रार्थना उपासना के मन्त्र और स्वस्तिवाचन, शान्तिप्रकरण और सामान्य प्रकरण आदि सब के अर्थ सरल और सु-बोध भाषा में जिसे साधारण से साधारण व्यक्ति भी आसानी से समझ सकें; अर्थ कर दिये हैं। और सर्व साधारण के सुभीते के लिये प्रातः और सायं काल के अग्निहोत्र के मन्त्र भी सरलार्थ द्वारा लिख दिये हैं।

(१) सर्व प्रथम जन्म पद्धति [वर्ष-गांठ] की विधि लिखी है जिसमें आपने अपने वेदों के कतिपय मन्त्र अर्थ सहित लिखे हैं पश्चात् समयोपयोगी भजन भी लिखा है। फिर वेदमन्त्र द्वारा प्रार्थना।

(२) वाग्दान [सगाई] की विधि लिखी है। इसके लिये भी आपने कई वेद मन्त्र सरलार्थ द्वारा लिखे हैं प्रार्थना मन्त्र भी। अन्त में एक गीत भी लिख दिया है। वर और कन्या के उपयोगी और आवश्यक गुण भी लिखे हैं।

मिलनी अर्थात् वर और वरातियों का स्वागत। इसमें आप

ने अथर्ववेद के ३ मन्त्र अर्थ सहित दिये हैं और स्वागत का गीत भी समयानुकूल लिख दिया है।

(४) व्यापारारम्भ पद्धति—इसमें भी आपने व्यापार परक अथर्व वेद के कई मन्त्र सरलार्थ सहित दिये हैं और प्रार्थना भी लिख दी है।

(५) अन्तिम शोकदिवस जो बारहवें या तेरहवें दिन मनाया जाता है। यद्यपि यह कोई संस्कार नहीं है और न इनके लिये आज तक कोई पद्धति ही बनी है परन्तु सर्व साधारण में इन उपरिलिखित पांचों कार्यों का चलन बराबर चला आता है और इनके कराने के लिये पुरोहित या पण्डितों को आर्य समाजी भी बुलाते हैं। अतः श्री मदनजित जी ने बड़े परिश्रम से वेदादि सत्य शास्त्रों का स्वाध्याय करके उक्त विधियों का निर्माण किया है। आपका परिश्रम सराहनीय है। जब ये कार्य अपरिहार्य हैं तब इनके लिये कोई विधि होना आवश्यकीय है। अतः मैं श्री मदनजित् जी के परिश्रम का हार्दिक अभिनन्दन करता हूँ और आर्य जनता से प्रार्थना करता हूं कि आप की इस लघु पुस्तिका को अपना कर इनके परिश्रम को सफल बनावें॥ शुभंभवतु॥

गंगाशरण शर्मा पुरोहित
फिरोजपुर शहर

लेखक के दो शब्द

चिरकाल से मैं यह अनुभव कर रहा था कि आर्य समाज के सदस्यों तथा अन्य साधारण जन समुदाय के लिये जिन सामाजिक कृत्यों को करना अनिवार्य है उनकी संगठन रूप में एक करने के लिये कोई पद्धति बनाई जावे। जब कभी किसी आर्य पुरोहित वा विद्वान् को किसी के गृह पर उसके बालक का जन्म दिवस, वाग्दान, मिलनी अथवा उसके किसी व्यापार सम्बन्धी कृत्य और शोक अवसर पर जाने का अवसर होता है और वहां वह केवल स्तुति, प्रार्थनोपासना, स्वस्तिवाचन, शान्तिपाठ इत्यादि साधारण हवन यज्ञ करके ही समाप्त कर देना उस विशेष कृत्य के लिये उसके पास न तो कोई पद्धति और न ही वेदमन्त्रों का संग्रह होता ऐसी कठिनाइयां मेरे सम्मुख भी होती तो मैं अपने आप को असमर्थ पाता। परन्तु वेद का निरंतर ३० वर्ष का स्वाध्याय करने के अनन्तर मुझे पवित्र वेद से ही इन सब आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये वेद मन्त्र मिल गये। मेरी प्रसन्नता की कोई सीमा न रही। जब इस वेद रूपी काम धेनु ने मेरी सब मनोकामनायें पूर्ण कर दी। एतदर्थ मैंने यह सब पद्धतियां 'आर्य' में विद्वानों के समालोचनार्थ प्रकाशित की अत्यन्त हर्ष का विषय है कि जितना भी मैंने विद्वानों से इस विषय पर वार्तालाप की सब ने मुक्त कण्ठ से इसकी प्रशंसा

की और शीघ्राति शीघ्र प्रकाशित करने के लिये प्रेरणा की। अतः यह अब आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से प्रकाशित हो रही है यद्यपि मैं स्वयं गत ३२ वर्ष से आर्य सिद्धान्तों का अत्यन्त गवेषण पूर्वक विचार करता रहा हूँ और पूज्य गुरुवर महर्षि दयानन्द जी के ग्रन्थों का भी कई बार स्वाध्याय किया है। इसलिये मेरा कोई आर्य भाई यह स्व हृदय में मिथ्या धारणा न कर ले कि चूँकि यह पद्धतियां संस्कार विधि में नहीं है अतः मानने योग्य नहीं है। मेरा इसमें नम्र निवेदन यह है कि प्रथमतः तो इन पद्धतियों में सब वेदमन्त्रों का ही विनियोग है जो कि हमारा मूल सिद्धान्त रूप से धर्म ग्रन्थ है दूसरे यद्यपि ऋषि दयानन्द ने हमारे पर्वों के लिये कोई विधि निर्माण नहीं की थी परन्तु आवश्यकताओं को लक्ष्य रखते हुये आर्य विद्वान् श्री भवानी प्रसाद जी ने आर्य पर्व पद्धति की रचना की जो सर्व जगत् में माननीय है। अतएव मैंने भी आर्यों की इस महती सामाजिक आवश्यकताओं की संलक्ष्य रखते हुये पवित्र वेद मन्त्रों द्वारा इसकी सुशोभित किया है। मुझे यह अत्यन्त गर्व है कि आर्य समाज के प्रमुख २ विद्वानों यथा पूज्य महात्मा श्री प्रभु आश्रित महाराज. पूज्य श्री आनन्द स्वामी जी महाराज पूर्व प्रधान आर्य प्रादेशिक सभा, श्री पूज्य स्वामी व्रतानन्द जी आचार्य गुरुकुल चित्तौड़, श्री पूज्य पं० धर्मदेव जी, विद्या वाचस्पति स० मन्त्री आर्य सार्वदेशिक प्रतिनिनिधि सभा, श्री पूज्य गुरुवर पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार, श्री पं० त्रिलोकचन्द्र जी शास्त्री

महोपदेशक आर्य प्रादेशिक सभा, श्री महात्मा हरभजनलाल जी वान प्रस्थी आदि ने मेरे इस परिश्रम की सराहना करते हुये मुझे स्व-आशीर्वाद प्रदान किया है जिसके लिये मैं उनका हार्दिक धन्यवाद करता हूं।

अन्त में स्वमित्र पूज्य श्री पं० गंगाशरण जी महोपदेशक आर्य प्रादेशिक सभा तथा श्री पं० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति और पं० इन्द्रजित पुरोहित का अत्यन्त कृतज्ञ हूं जिन्होंने मेरे इस सम्पूर्ण पुस्तक का संशोधन किया है।

मैं आशा करता हूं कि मेरे इस परिश्रम से आर्य जनता विशेष लाभ उठा कर मुझे कृतार्थ करेगी।

विद्वानों का सेवकः—
मदनजित् आर्य, वैदिक धर्म विशारद
महाशय दी हट्टी, फिरोज़पुर शहर

१ जून १९५३

प्रकाशक की ओर से !

यह "सामाजिक-पद्धतियां" पुस्तक जनता और विद्वानों के विचार विमर्श के लिये हम प्रकाशित कर रहे हैं। जिन जिन कार्य-क्रमों की विधियां इस पुस्तक में दी गई हैं वे सारे ही कार्य क्रम प्रायः सभी के यहां किसी न किसी रूप में मनाये जाते हैं। जो लोग इन्हें करते हैं उनके लिये यह पद्धतियां उपयोगी हैं और सामयिक भी। इस परिश्रम के लिये स्वाध्यायशील वैदिक कर्म-काण्ड के प्रेमी श्री मदनजित् जी धन्यवाद के पात्र हैं।

पद्धतियों के अतिरिक्त स्वस्तिवाचन और शांति प्रकरण आदि के सरल अर्थ भी इसमें दिये हैं जिनसे पुस्तक की उपयोगिता और भी बढ़ गई है।

इतना मैं स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि इन पद्धतियों की आवश्यकता और पुस्तक में वर्णित अन्य विधियों के लिये सभा का कोई उत्तरदायित्व नहीं है। लेखक की सूझ और परिश्रम जनता के सम्मुख आये, इस कारण यह पुस्तक प्रकाशित की जा रही है। १००) श्री मदनजित् जी ने पुस्तक का मूल्य कम करने के लिये दिये हैं अतः लागत से भी कम मूल्य पुस्तक का रखा जा रहा है।

—मानकचन्द 'मंत्री'

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब (जालंधर)

॥ ओ३म् ॥

सामाजिक-पद्धतियां

अथ ईश्वर स्तुति प्रार्थनोपासना मंत्राः

१—ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव।
यद्भद्रन्तन्न आसुव ॥ यजु० ३०.३ ॥

अर्थ—हे (सवितः) सब जगत् को उत्पन्न करने वाले (देव) सर्व सुख दाता प्रभु (नः) हमारे (विश्वानि) सब (दुरितानि) दुर्गुण दुर्व्यसन दुखों को (परासुव) दूर कर दीजिये (यत्) और जो (भद्रं) अच्छे गुण व पदार्थ हैं (तत्) वह (नः आसुव) सब हमको प्राप्त कराइये।

२—हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्। स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥यजु० १३.४॥

अर्थ—जो (हिरण्यगर्भः) स्वप्रकाश स्वरूप और सूर्याचन्द्रादि पदार्थों का उत्पत्ति कर्त्ता है (भूतस्य) सर्व उत्पन्न हुये जगत का (जातः) प्रसिद्ध रचने हारा (पतिः) पालन करने हारा (एक) एक ही सहाय की अपेक्षा से रहित (आसीत) था (अग्रे) जगत् रचने

से पहले (समवर्त्तत) विद्यमान था (सः) वह (इमाम्) इस (पृथिवीम्) प्रकाश रहित भूमि (उत) और (द्यां) प्रकाश सहित सूर्यादि लोकों का (दाधार) धारण कर रहा है (कस्मै) सुख स्वरूप (देवाय) शुद्ध परमात्मा के लिये हम सब (हविषा) आत्मादि सामग्री से (विधेम) विशेष भक्ति किया करें।

३—ओ३म् य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः। यस्यच्छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥यजु० २५।१३॥

अर्थ—(यत्) जो (आत्मदा) आत्मज्ञान का दाता (बलदा) सब सामर्थ्य को देनेहारा (यस्य) जिसकी (विश्वे) सब (देवाः) सब विद्वान् लोग और (यस्य) जिसकी (प्रशिषम्) उत्तम शिक्षा तथा शासन और न्याय (उपासते) को मानते हैं (यस्य) जिस का (छाया) सहारा ज्ञान पूर्व उपासना (अमृतम्) मुक्तिदायक है। और (यस्य मृत्युः) जिसकी आज्ञा का भंग अथवा अज्ञान ही मरण के तुल्य है (कस्मै देवाय हविषा विधेम) हम उस सुख स्वरूप ईश्वर की प्राप्ति के लिये आत्मा से भक्ति करें।

४—यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव। य ईशेअस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥यजु० २३.३॥

अर्थ—(यः) जो (प्राणतः) प्राणवाले और (निमिषतः) अप्राणि रूप जड (जगतः) जगत् का (महित्वा) अपनी महिमा से (एकइत) एक ही (राजा) संसार का अधिष्ठाता (वभूव) होता है और (यः) जो (अस्य) इस संसार का (ईशे) सर्वोपरि स्वामी

है और जो (द्विपदे) दो पैर वाले मनुष्यादि (चतुष्पदे) चार पग वाले गौ आदि पशुओं की रचना करता है। (कस्मै देवाय हविषा विधेम) उस आनन्द स्वरूप अति मनोहर परमेश्वर की विशेष भाव से भक्ति सेवा करें।

५—येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा येन स्वः स्तभितं येन नाकः। यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥यजु० ३२।६॥

अर्थ—(येन) जिस जगदीश्वर ने (उग्रा) तीव्र तेज वाले (द्यौः) प्रकाश युक्त सूर्यादि पदार्थ (च) और (पृथिवी) भूमि (दृढा) दृढ़ की है। (येन) जिसने (स्वः) सुख को (स्तभितम्) धारण किया हुआ है (येन) जिसने (नाकः) सब दुःखों से रहित मोक्ष धारण किया है (यः) जो अन्तरिक्षे) मध्यवर्ती आकाश में वर्तमान (रजसः) लोक समूह का (विमानः) विशेष मान करने वाला है। अर्थात् चलानेवाला है। (कस्मै देवाय हविषा विधेम) उस सुख स्वरूप स्वयं प्रकाशमान सकल सुखदाता ईश्वर के लिये हम लोग प्रेम भक्ति से प्राप्त हों।

६—प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नोऽअस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥ऋ० १०।१२१।१०॥

अर्थ—(प्रजापते) सब प्रजा के स्वामिन् (त्वत्) आप से (अन्यः) भिन्न दूसरा कोई (ताऐतानि) उन इन (विश्वा) सब (जातानि) उत्पन्न हुये भूगोलादि का (न) नहीं (परिबभूव) तिरस्कार

स्कार करता है अर्थात् आप सर्वोपरि हैं। (यत् कामाः) जिस २ पदार्थ की कामना करने वाले हम लोग (ते) आपका (जुहुमः) आश्रय लेवे (तत्) उस २ की कामना (नः) हमारी सिद्ध (अस्तु) होवे जिससे (वयं) हम लोग (रयीणाम्) धनैश्वर्यो के (पतयः) स्वामी (स्याम) होवें।

७—स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा। यत्र देवा अमृत मानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त ॥ यजु० ३२।१०॥

अर्थ—(यत्र) जिस (तृतीये) जीव और प्रकृति से विलक्षण (धामन्) आधार रूप जगदीश्वर में (अमृतं) मोक्ष सुख को (आनशानः) प्राप्त करते हुये (देवाः) विद्वान लोग (अध्यैरयन्त) सर्वत्र अपनी इच्छा पूर्वक विचरते हैं। जो (विश्वा) सब (भुवनानि) लोक लोकान्तरों और (धामानि) जन्म स्थान नामों को (वेद) जानता है (सः) वह परमात्मा (नः) हमारा (बन्धुः) भाई के तुल्य मान्य सहायक (जनिता) उत्पन्न करने हारा (सः) वही (विधाता) सब पदार्थों और कर्म फलों का विधान करने वाला है।

८—अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यस्मज्जुहुराण मेनो भूयिष्ठांते नम उक्तिं विधेम ॥यजु ४०।१५॥

हे (देव) दिव्य स्वरूप (अग्ने) प्रकाश स्वरूप करुणामय जगदीश्वर जिससे हम लोग (ते) आप के लिये (भूयिष्ठाम)

अधिकतर (नमउक्ति) सत्कार पूर्वक प्रशंसा का (विधेम) सेवन करें। इससे (विद्वान) सब को जानने वाले आप (अस्मत्) हम लोगों से कुटिलता रूप (एनः) पापाचरण की (युयोधि) पृथक् कीजिये (अस्मान्) हम जीवों को (राये) विज्ञान धन से सुख के लिये (सुपथा) धर्मानुकूल मार्ग से (विश्वानि) समस्त (वयुनानि) प्रशस्त ज्ञानों को (नय) प्राप्त कराइये।

---:o:---

अथ स्वस्तिवाचनम्

ज्ञान स्वरूप प्रभु की स्तुति

१—अग्नि मीड़े पुरोहितं यज्ञस्य देव मृत्विजम्।
होतारं रत्न धातमम् ॥ ऋ० १।१।१

अर्थ—(पुरोहितं) उत्पत्ति से पूर्व सृष्टि के परमाणुवों को धारण करने वाला (यज्ञस्य) यज्ञ शिल्प क्रिया के (देवम्) प्रकाशक (ऋत्विजम्) ऋतुओं के निर्माता (होतारम्) देने तथा ग्रहण करने वाले (रत्न धातमम्) सर्व रत्नों के उत्पादक (अग्निं) अग्नि रूप परमेश्वर की (ईडे) स्तुति करता हूं।

पिता पुत्र भाव

२—स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव।
सचस्वा नः स्वस्तये ॥ ऋ० १।१।९

अर्थ—हे (अग्ने) ज्ञान स्वरूप परमात्मन् (सः) आप (सूनवे) स्व पुत्र के लिये (पितेव) पिता जैसे उत्तम ज्ञान

का देने वाला होता है वैसे ही (नः) हमें (सुपायनः भव) शुभ गुण और कर्मों में सदा लगावे (स्वस्तये) और कल्याण के लिये (नः) हमें (सचस्व) सर्वदा युक्त कीजिये ॥२॥

प्रभु की कल्याणकारिणी विभूति

३—स्वस्ति नो मिमीतामश्विना भगः
स्वस्तिदेव्यादितिरनर्वणः ।
स्वस्ति पूषा असुरो दधातु नः स्वस्तिद्यावा
पृथिवी सुचेतुना ॥३॥ ऋ० ५-५१-११

अर्थ—हे ईश्वर ! (अश्विना) अध्यापक और उपदेशक (नः स्वस्ति मिमीताम्) हमारे लिये कल्याण करें । (भगः अदिति देवी अनर्वणः) ऐश्वर्यशाली दिव्य गुणों वाली प्रभु की अखण्डित शक्ति ऐश्वर्य रहित हम लोगों का कल्याण करे । (पूषा असुरः द्यावा पृथिवी सुचेतुना स्वस्ति) पुष्टि कारक मेघ द्यौलोक वा पृथिवी लोक अच्छी प्रकार हमें सुख प्रदान करे ॥३॥

प्रभुदत्त पदार्थों की प्रशंसा

४—स्वस्तये वायुमुपब्रवामहै
सोमं स्वस्ति भुवनस्य यस्पतिः ।
बृहस्पतिं सर्वगणं स्वस्तये
स्वस्तय आदित्यासो भवन्तु नः ॥४॥ ऋ० ५-५१-१२

हे परमेश्वर ! (वायुम् स्वस्तये उपब्रवामहै) गतिशील वायु सदृश वीर हमें उपदेश करें । (स्वस्ति सोमं भुवनस्य

स्पतिः) संसार के भीतर रस डालने वाले सोम चन्द्रमा हमारे लिये सुखकारी हो। (बृहस्पतिं सर्व गणं स्वस्तये) सब से बड़ा ज्ञान का गुरु प्रभु हमारा कल्याण करे। (स्वस्तय आदित्य सो भवन्तु नः) आदित्य ब्रह्मचारी हमारे लिये सुख देने वाले हों ।४।

प्रभु शक्तियों से रक्षा के लिये प्रार्थना

५—विश्वे देवा नो अद्या स्वस्तये वैश्वानरो वसुरग्निः स्वस्तये। देवा अवन्त्वृभवः स्वस्तये स्वस्ति नो रुद्रः पात्वंहसः ॥ ऋ. ५-५१-१३

अर्थ—(अद्या विश्वे देवा नो स्वस्तये) आज सब विद्वान् जन हमें इस यज्ञ में मंगलकारी हों (वसुरग्निः वैश्वानरो स्वस्तये) सर्वत्र व्याप्त अग्नि हमारी रक्षा करे। (ऋभवः रुद्रः अहंसः पातु स्वस्तये) मेधावी तेजस्वी तथा दुष्टों को संतप्त कर्त्ता ईश्वर हमारे कल्याणार्थ सब पापों से बचावें ॥५॥

कल्याण के लिये याचना

६—स्वस्ति मित्रावरुणा स्वस्ति पथ्ये रेवति। स्वस्ति न इन्द्रश्चाग्निश्च स्वस्ति नो अदिते कृधि ॥ ऋ. ५-५१-१४

अर्थ—हे (अदिते) अखण्डित ईश्वर (स्वस्ति नः कृधि) हमारे लिये कल्याण करो। (इन्द्रः अग्नि नः स्वस्ति) वायु और विद्युत् हमारा कल्याण करे (मित्रा वरुणा स्वस्ति पथ्ये रेवति) धन युक्त मार्ग में प्रभु की मित्र और वरुण शक्तियां हमारा कल्याण करें। अर्थात् जीवन में हमें सुख प्राप्त हो ॥६॥

सत्संग द्वारा कल्याण प्राप्ति

७—स्वस्ति पन्थामनुचरेम सूर्या चंद्रमसाविव। पुनर्ददताऽघ्नता जानता संगमेमहि ॥ ऋ० ५।५१।१५

अर्थ—(सूर्याचन्द्र मसौ इव) सूर्य चन्द्रमा सदृश (स्वस्ति पन्थामनुचरेम) सुख पूर्वक उत्तम मार्ग पर विचरें। उत्तम आचरण का अनुष्ठान करें। (पुनः ददता अघ्नता जानता संगमेमहि) बार २ दानी-ज्ञानी अहिंसक की संगति करें।

विद्वानों के उपदेशों की कामना

८—ये देवानां यज्ञिया यज्ञियानां मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः। ते नो रासन्ता मुरुगायमद्य यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः। ऋ० ७।३।७

अर्थ—(ये यज्ञिया देवानां यज्ञियानां) जो याज्ञिक विद्वानों में श्रेष्ठ हैं और (मनोः यजत्राः अमृताः ऋतज्ञाः) मनस्वी जीवन्मुक्त सत्यज्ञानी के साथी हैं (ते नः उरुगायम् रासन्ताम्) वे हमें कीर्ति ज्ञान का उपदेश करें (यूयं नः स्वस्तिभिः सदापात) तुम सब हमें सर्वदा हितकारी उपायों से रक्षा करो।

ब्रह्मचारियों की प्राप्ति

९—येभ्योमाता मधुमत्पिन्वते पयःपीयूषं द्यौरदिति रद्रिबर्हाः। उक्थशुष्मान् वृष भरान्त्स्वप्नसस्तां

आदित्यां अनुमदा स्वस्तये ॥ ऋ० १०।६३।३

अर्थ—(येभ्यः माता मधुमत्पयः पिन्वते) जिन विद्वानों के लिये पृथिवी माता मधुर गुण युक्त पदार्थ देती है। (अदितिः द्यौः अद्रिबर्हाः पीयूषं) अखण्डनीय द्यौलोक मेघों द्वारा जल देता है। (उक्थशुष्मान् वृषभरान् स्वप्न सस्तां आदित्यान् स्वस्तये अनुमदा) ऐसे बलशाली पोषक उत्तम शोभनकर्मी विद्वान् हमें सुख दें।

मुक्ति प्राप्ति

१०–नृचक्षसो अनि भिषन्तो अर्हणा बृहद्देवासो अमृतत्व-मानशुः। ज्योतीरथा अहिमाया अनागसो दिवो वर्ष्माणं वसते स्वस्तये ॥ ऋ० १०।६३।४

अर्थ—(नृचक्षसः अनिमिषन्तः अर्हणा बृहत्देवासः अमृतत्वम आनशुः) ज्ञान द्रष्टा अप्रमादी, पूजनीय बड़े विद्वान् जीवन मुक्त होते हैं (ज्योतीरथा) तेजस्वी साधनों से युक्त होकर (अहिमाया) बुद्धिमान् अप्रतिहत बुद्धि, (अनागसः) निष्पाप (दिवः) तेजोमय प्रभु के (वर्ष्माणं) उच्चपद (वसते) प्राप्त होते हैं। (स्वस्तये) वे हमारा कल्याण करें।

तेजस्वी विद्वानों का सन्मान

११–सम्राजो ये सुवृधो यज्ञमाययुरपरिह्वृता दधिरे दिवि क्षयम्। तां आविवास नमसा सुवृक्तिभिर्महो आदित्यां अदितिं स्वस्तये ॥ ऋ० १०।६३।५

अर्थ—(ये सम्राजः) जो अच्छे तेज युक्त (सुवृधः) उत्तम प्रकार से ज्ञानादि में बढ़े हुये (अपरिह्वृताः) छल रहित, सुधार्मिक विद्वान् (यज्ञ माययुः) यज्ञ का धारण करते हैं। तथा (दिवि) ज्ञान में (दधिरे क्षयम्) निवास करते हैं। (तां) उन (आदित्यान्) तेजस्वी (अदितिं) अखण्डनीय व्रतधारी की (सुवृक्तिभिः) उत्तम वचनों द्वारा (नमसा) नम्रता पूर्वक (स्वस्तये आविवास) स्व कल्याणार्थ सेवा किया करो।

प्रभु का यज्ञ

१२–को वः स्तोमं राधति यं जुजोषथ विश्वे देवासो मनुषो यतिष्ठन। कोवोऽध्वरं तुविजाता अरंकरद्योनः पर्षदत्यहंः स्वस्तये ॥ ऋ० १०।६३।६

अर्थ—(विश्वे देवासः) हे समस्त विद्वानो, ज्ञानाभिलाषी जनो! (वः स्तोमं) आप लोगों में वह स्तवन करने योग्य (कः राधति) प्रजापति उपदेश करता है (यं जुजोषत्थ) जिस की आप प्रेम पूर्वक उपासना करते हो (तुविजाताः) बहु कीर्ति युक्त (मनुषः) मननशील पुरुषो (यतिष्ठन वः) जितने भी तुम हो (कः अध्वरं अरंकरत्) यज्ञ को कौन अर्थात् वही परमात्मा ही सूभूषित करता है (स्वस्तये) जो कल्याणार्थ (नः अति अहंः पर्षित) हमें पापों से हटा कर पार करता है।

आदित्य ब्रह्मचारियों की पूजा

१३–येभ्यो होत्रां प्रथमा मायेजे मनुः समिद्धाग्निर्मनसा

सप्तहोतृभिः । त आदित्या अभयं शर्म यच्छत सुगा नः कर्त सुपथा स्वस्तये ॥ ऋ० १०।६३।७

अर्थ—(येभ्यः) जिन आदित्य ब्रह्मचारियों के लिये (समिद्धाग्निः मनुः) अग्नि होत्री (मनसा) मन से (सप्तहोतृभिः) सात ज्ञानेन्द्रियों द्वारा (प्रथमां होत्रां) मुख्य यज्ञ को (आयेजे) करते हैं । अर्थात् जिन ब्रह्मचारियों के लिये बड़े २ यज्ञों द्वारा आदर करते हैं । (ते) वह (आदित्या) सूर्यवत् तेजस्वी ब्रह्मचारी (अभयं शर्म) निर्भयता पूर्वक सुख (यच्छत) देवें (नः स्वस्तये) और हमारे कल्याणार्थ (सुगा सुपथा कर्त्त) सुगम वैदिक धर्म का उपदेश करें ।

ज्ञानियों के कर्त्तव्य

१४—यईशिरे भुवनस्य प्रचेतसो विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च मन्तवः । ते नः कृतादकृतादेनसस्पर्यद्या देवासः पिपृता स्वस्तये ॥ १०।६३।८

अर्थ—(ये प्रचेतसः मन्तवः) जो उत्कृष्ट ज्ञान तथा मननशील ज्ञानी पुरुष हैं (विश्वस्य स्थातुः जगतः चभुवनस्य) वह ही सब स्थावर और जंगम लोक के (ईशिरे) मालिक बनते हैं अर्थात् शासक होते हैं । (ते नः) वह हमें(कृतात् अकृतात् एनसः) किये और न किये पाप से परि (देवासः) सब ज्ञानादि शक्ति से (स्वस्तये) सुख (पिपृतः) प्रदान करें ।

आस्तिकों के कर्त्तव्य

१५–भरेष्विन्द्रं सुहवं हवामहेऽहोमुचं सुकृतं दैव्यं जनम्। अग्निं मित्रं वरुणं सातये भगं द्यावापृथिवी मरुतः स्वस्तये॥ ऋ० १०।६३।६

अर्थ—हम (भरेषु) यज्ञों में (स्वस्तये) योगक्षेम और कल्याण के लिये (सुहवं) सुखप्रद (अहंमुचं) पापों से छुड़ाने वाले (दैवयं जनम्) आस्तिक पुरुष (अग्निं मित्रं वरुणं) अग्निविद्या, प्राणविद्या तथा जलविद्या में निपुण (भगं) ऐश्वर्यवान् (द्यावा पृथिवी) सूर्य भूमिवत् (मरुतः) वायु वत् बलवान इन्द्र को (हवामहे) आदर पूर्वक बुलाते हैं।

सुन्दर नौका

१६–सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसं सुशर्माणमदितिं सुप्रणीतिम्। दैवींनावं स्वरित्रामनागस मस्रवन्तीमा रुहेमा स्वस्तये॥ ऋ० १०।६३।१०

अर्थ—(सु-त्रामाणं) उत्तम रीति से रक्षा करने वाली (पृथिवीम्) विस्तृत (द्याम्) प्रकाश युक्त (अनेहसं) उपद्रवरहित (सुशर्माणं) सुख कारक (अदितिं) अटूट (सुप्रणीतिम्) सुन्दर बनी हुई (दैवी) जल अग्नि भाप विद्युत आदि से चलने वाली (विमानादि) (स्वरित्राम्) सुन्दर चप्पुओं वाली (अनागसम्) संकटों से रहित (अस्रवन्तीम्) निच्छिद्र (नावं) नौका पर (स्वस्तये आरुहेम्) सुख के लिये चढ़ें।

विद्वत् पूजन

१७–विश्वे यजत्रा अधिवोचतोतये त्रायध्वं नो दुरेवाया अभिहुतः। सत्यया वो देवहूत्या हुवेम शृण्वतो देवा अवसे स्वस्तये। ऋ० १०।६३।११

अर्थ—हे (विश्वे यजत्राः) पूजनीय विद्वानो ! (ऊतये) रक्षा के लिये (अधिवोचत) आप उपदेश किया करें और (अभिहुतः) चारों ओर से नाश करने वाली कुटिल चाल से (दुरेवायाः) दुर्गति से (नः त्रायध्वम्) हमारी रक्षा करो। हे (देवाः) विद्वान तेजस्वी पुरुषो ! (वः सत्यया) आपकी सच्ची (शृण्वतः) श्रवण योग्य (देव हूत्या) आदर युक्त वाणी (अवसे) रक्षार्थ (स्वस्तये हुवेम) कल्याणके लिये बुलाया करें।

यज्ञ से रोग निवृत्ति

१८–अपामीवामपविश्वामनाहुतिमपारातिं दुर्विदत्रा मघायतः। आरे देवा द्वेषो अस्मद्युयोतनोरुणः शर्मयच्छता स्वस्तये ऋ० १०।६३।१२

अर्थ—हे (देवाः) विद्वान् लोगो (अमीवाम् अपयुयोतन) रोगादि शत्रु को पृथक करो (विश्वाम्) सब (अनाहुतिम) कृपणता को (अप) दूर करो (अराति अप) लोभ बुद्धि को दूर करो (अघायतः दुर्विदत्राम् द्वेषः अस्मत् आरे युयोतन) पापी दुष्ट बुद्धि तथा द्वेष करने वाले को भी हम से परे करो। (नः ऊरु-शर्म स्वस्तये यच्छत) और हमारे कल्याण के लिये बहुत सुख प्रदान करो।

विद्वानों के उपदेश से धर्म मार्ग पर चलना।

१६—अरिष्टः समर्त्तो विश्व एधते प्र प्रजाभिंजायते धर्मणस्परि। यमादित्यासो नयथा सुनीतिभिरति विश्वानि दुरिता स्वस्तये ॥ ऋ. १०.६३।१३

अर्थ—हे (आदित्यासः) विद्वान् तेजस्वी पुरुषो (यं स्वस्तये सुनीतिभिः) तुम कल्याण के लिये सुशिक्षा से (विश्वानि दुरिता) और सब कुमार्ग, दुर्व्यसनों से (परिअति नयथ) छुड़ा कर सुमार्ग पर ले जाते हो (स० मर्त्तः) वह मनुष्य (अरिष्टः एधते) अपीड़ित होकर बढ़ता है। और (धर्मणः) धर्मानुष्ठान से (परि प्रजाभिः प्रजायते) स्व पुत्र पौत्रादिकों के साथ अच्छी प्रकार उत्कृष्ट हो जाते हैं।

सुन्दर रथ

२०—यं देवासोऽवथ वाज सातौ यं शूरसाता मरुतो हिते धने। प्रातर्यावाणं रथमिन्द्र सानसिमरिष्यन्तमा रुहेमा स्वस्तये। ऋ. १०।६३।१४

अर्थ—हे (मरुतो देवासः) मितभाषी विद्वानों (वाजसातौ) ज्ञान, ऐश्वर्य, अन्नादि के लाभ के लिये (यं रथम्) जिस रमणीय गमन साधन-वाह्य यानादि की (अवथ) रक्षा करते हो (हितेधने) हित धन को प्राप्त और उपभोग करने के लिये (शूरसाता) वीर पुरुषों के करने योग्य संग्राम में रक्षा करते (इन्द्रसानसिं) उत्तम ऐश्वर्यवान् (प्रातर्यावाणम्) प्रातःकाल

से ही गमन योग्य (अरिष्यन्तम्) हानिरहित उस रथ पर (स्वस्तये आरुहेम) हम कल्याणार्थ चढ़ें। अथवा उसका आश्रय लें।

सर्व स्थान कुशलता के लिये प्रार्थना

२१-स्वस्ति नः पथ्यासु धन्वसु स्वस्त्यप्सु वृजने स्वर्वति।
स्वस्ति नः पुत्रकृथेषु योनिषु स्वस्तिरायेमरुतो दधातन ॥ ऋ १०।६३।१५

अर्थ—हे (मरुतः) वायु सदृश बलवान तथा विद्वान जनो ! (पथ्यासु नः स्वस्ति दधातन) हमारे राज मार्गों में कल्याण करो (धन्वसु नः स्वस्ति दधातन) जल रहित स्थानों पर सुख हो (अप्सु वृजने स्वर्वति) जल स्थानों पर तथा सब आयुधों से युक्त सेना में (पुत्र कृथेषु योनिषु) पुत्रोत्पत्ति स्थान में (रायः नः स्वस्ति दधातन) ऐश्वर्य को प्राप्त करने के लिये हमें सुख प्रदान करो ॥

मातृभूमि अथवा गृहदेवी

२२-स्वस्तिरिद्धि प्रपथे श्रेष्ठा रेक्णस्वत्यभि या वाममेति।
सा नो अमासो अरणे निपातु स्वावेशा भवतु देवगोपाः ॥ ऋ १०।६३।१६

अर्थ—(प्रपथे स्वस्ति) उत्तम मार्ग में चलने वाले का कल्याण हो। (श्रेष्ठा) अति सुन्दर (रेक्णस्वती) उत्तम धन ऐश्वर्य वीर्य वाली (यावामम् अभिऐति) जो पृथिवीवत् देवी पुरुष को प्राप्त होती है। (सा अमा) वह सहचारिणी गृहवत्

सुगृहिणी हो (सनः) वह हमें (अरणे) वनादि देशों अथवा निर्जन स्थान में (पातु) हमारा पालन पोषण रक्षा करे (सु-आवेशा) सुख प्रद निवास गृह से युक्त हो कर (देव गोपाः भवतु) उत्तम पुरुषों और उत्तम प्रिय पति से सुरक्षित हो।

श्रेष्ठ कर्मों में ईश्वर उपदेश

२३—इषे त्वोर्ज्जेत्वा वायवस्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मण आप्यायध्व मघ्न्या इन्द्राय भागं प्रजावतीरनमीवा अयक्ष्मामा वस्तेन ईशतमाघश ᳪ सो ध्रुवा अस्मिन् गोपतौस्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि ॥ यजु. १।१

अर्थ—हे मनुष्य ! (इषे ऊर्ज्जेत्वा) अन्न वा बलादि के लिये तुम को (वाय-वस्थ) वायु सदृश पराक्रम शील अथवा प्राण रूप (सविता देवाः) सर्वोत्पादक देव प्रभु (श्रेष्ठतमाय कर्मणे) यज्ञ रूप श्रेष्ठ कर्मों के लिये (वः प्रार्पयतु) संयुक्त करे। (इन्द्रायभागं आप्यायध्वं) और अपने ऐश्वर्य भाग को बढ़ावें (अघ्न्या प्रजावतीः अयक्ष्मा अनमीवा) न मारने योग्य बछड़ो सहित तथा क्षय रोग रहित गौएं सम्पादन करें। (मावस्तेन ईशत) चोर हमारा मालिक न बने (मा अघशंसः न) अन्य पापी भी रक्षक न बने (बह्वीः ध्रुवाः) बहुत से दीर्घ जीवी गौवें (याउक्तपदार्थ अस्मिन् गोपतौ) इस गो रक्षक के पास (स्यात्) बनी रहे। (यजमानस्य पशून्पाहि) यज्ञ करने वाले के पशुओं की हे ईश्वर ! रक्षा करो।

भद्र कर्म

२४—आनो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासो अपरीताम उद्भिदः। देवा नो यथासदमिद्वृधेऽअसन्न प्रायुवो रक्षितारो दिवे दिवे ॥ यजुः २५।१४

अर्थ—हे विद्वानो (विश्वतः नः भद्राः) सब ओर से हमें कल्याणकारक (अदब्धासः) अविनाशी (अपरीतास) का सर्वोत्तम (उद्भिदः) दुःखविनाशक (क्रतवः आयन्तु नः) विज्ञान वा बल प्राप्त हो (यथा) जिस से (नः रक्षितारः) हमारे रक्षक (देवाः) विद्वान् जन (अप्रायुवः) दीर्घायु और अप्रमादी हो कर (दिवे दिवे वृधे) प्रति दिन उन्नति के लिये (नः सदम् असत्) हमारी सभा में विद्यमान हों।

देवों से मित्रता

२५—देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवानांᳯ रातिरभि नो निवर्त्तताम्। देवानांᳯ सख्य मुपसेदिमा वय देवा न आयुः प्रतिरन्तु जीवसे ॥ यजु २५।१५

अर्थ—(देवानाम्) ज्ञान प्रकाशक पुरुषों की (भद्रा सुमतिः) सुखप्रद अच्छी बुद्धि (नः) हमें (निवर्त्तताम्) सब प्रकार से प्राप्त हो। (ऋजूयतां) सरलतया आचरण करने वाले (देवानां) विद्वानों के (रातिः) ज्ञान और धन के दान (नः अभिनिवर्त्तताम्) हमें प्राप्त हो। (देवानां सख्यम् उपसेदिम) विद्वानों की मित्रता को अच्छी प्रकार पावें। (देवाः जीवसे आयुः

प्रतिरन्तु) देवता लोग हमारी आयु को दीर्घकाल जीवन के लिये बढ़ावें।

सुख प्राप्ति अर्थ ईश्वर आह्वान्

२६—तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियं जिन्वमवसे हूमहे वयम्। पूषा नो यथा वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये॥ यजु २५।१८

अर्थ—(तम् जगतः तस्थुषः) उस जड़ और चेतन के पति (धियं जिन्वम्) बुद्धि से प्रसन्न करने वाले (ईशानम्) परमेश्वर को (वयं अवसे हूमहे) हम रक्षा के लिये बुलाते हैं। प्रार्थना और स्तुति करते हैं। (यथा) जिससे (पूषा) सबका पोषक (रक्षिता) रक्षक (पायुः) पालक (अदब्धः) अपराजित (नः) हमारे (वेदसां) धनैश्वर्यों और ज्ञानों के (वृधे) वृद्धि करने के लिये और (स्वस्तये) कल्याणार्थ (असत्) हो।

ज्ञान प्रार्थना

२७—स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्तिनस्तार्क्ष्योअरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु॥ यजु २५।१९

अर्थ—(वृद्धश्रवाः इन्द्रः) बहुत अधिक ज्ञान, यश, धन [illegible]के प्रभु (नः स्वस्तिदधातु) हमें सुख प्रदान करे। (विश्वेदाः पोषाः नः स्वस्ति दधातु) सर्वज्ञ पुष्टि कर्त्ता परमात्मा [ह]मारा कल्याण करे। (तार्क्ष्यः अरिष्टनेमिः नः स्वस्तिदधातु) [ती]क्ष्ण तेजस्वी दुख हर्त्ता ईश्वर हमें सुख प्रदान करे। (बृहस्पति [नः] स्वस्तिर्दधातु) ज्ञानपति हमें ज्ञान द्वारा सुख दे।

भद्र कामना

२८—भद्रंकर्णेभिःशृणुयाम देवा भद्रंपश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरै रङ्गैस्तुष्टुवा ᳪसस्तनू भिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः। ॥यजु० २५।२१॥

अर्थ—हे (यजत्रा देवा भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम) ईश्वर उपासक सत्संगी पुरुषो ! आप सदा कानों से हितवचनों का ही श्रवण करो। (भद्रं पश्येम अक्षभिः) और आंखों से सुख कल्याण जनक दृश्य देखा करें। (स्थिरैः अङ्गैः) दृढ़ अंगों से (तुष्टुवांसः) ईश्वर स्तुति करते हुये (तनूभिः) शरीरों से अथवा भार्यादि पुत्रों सहित (देवहितं) विद्वानों द्वारा निश्चित की हुई (यत् आयु) जो आयु है (विअशेमहि) उसको अच्छे प्रकार प्राप्त करें।

ब्रह्मांड रूपी यज्ञ का होना

२९—अग्न आयाहि वीतये गृणानो हव्य दातये।
निहोता सत्सिबर्हिषि ॥साम० १।१।१॥

हे (अग्ने) प्रकाशमय प्रभो ! (वीतये) ज्ञान के लिये (गृणानः) प्रशंसित हुये आप (हव्य दातये) हव्य पदार्थ देने के लिये (आयाहि) प्राप्त हो। (होता) हे सब पदार्थों के ग्रहण करने वाले (बर्हिषि) यज्ञादि शुभावसर पर (निसत्सि) स्थित होवें।

उपदेष्टा प्रभु

३०—त्वमग्ने यज्ञना ᳪ होता विश्वेषा ᳪ हितः। देवेभिर्मानुषे जने ॥साम० १।१।२॥

हे (अग्ने) पूजनीयेश्वर (विश्वेषां यज्ञानो होता) आप समस्त यज्ञों के उपदेष्टा हो (देवेभिः मानुषे जने हितः) विचारशील पुरुषों में भक्ति उत्पादन द्वारा तुम हमारे हृदयों में स्थित होवो।

सांसारिक पदार्थों से बल प्राप्ति

३१—ये त्रिषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः। वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वो अद्य दधातु मे।

॥अथर्व० १।१।१॥

(येन सप्ताः) जो तीन गुणों अर्थात् सत रज तम और सात पदार्थ (विश्वा रूपाणि बिभ्रतः) समस्त रूपों की धारणा करते हुये (परियन्ति) विचरते हैं (तेषां मेतन्वः) उनको मेरे शरीर में (वाचस्पति अद्य दधातु) आज परमेश्वर धारण करावे। सात पदार्थ—पृथिवी, अप, तेज, वायु, आकाश, तन्मात्र और अहंकार (तीन अवस्थायें:—समावस्था, गतिरूप अवस्था तथा गति हीन अवस्था)

अथ शान्ति प्रकरणम्

शान्ति की याचना

१—शन्न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शन्न इन्द्रा वरुणा रात
हव्या शमिन्द्रा सोमा सुविताय शंयोः शन्न इन्द्रा
पूषणा वाजसातौ ॥ ऋ० ७।३५।१॥

अर्थ—(इंद्र अग्निः) क्षात्र तथा ब्रह्म तेज (अवोभिः) अन्नों और रक्षा साधनों द्वारा (शं नः भवताम्) हमारे लिये शान्ति दायक हों। (इन्द्रा वरुण सेनापति और राजा अथवा विद्युत और जल (रात हव्या) ग्रहण तथा देने योग्य जल अन्नादि पदार्थों को प्राप्त करने वाले (नः शम्) हमें सुख दें। (इन्द्रा सोमा शम्) विद्युत और औषधिगण अथवा आचार्य शिष्य शान्ति दायक हों (सुविताय) सुखमय जीवन व्यतीत और ऐश्वर्य प्राप्त करने के लिये भी दुख दूर करने वाले हों (शंयो वाजसातौ इन्द्रा पूषणा शम्) अन्नादि लाभ के लिये इन्द्र और वायु हमारे लिये कल्याणकारक हो।

अभिमान त्याग

२—शनो भगः शमु नः शंसो अस्तु शंनः पुरन्धिः
शमु सन्तु रायः। शं नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः
शं नो अर्यमा पुरुजातो अस्तु ॥ ऋ० ७।३५।२॥

अर्थ—(भगः नः शम्) ऐश्वर्य हमारे लिये सुख दायक

हो (शंसः नः शम् अस्तु) प्रशंसा अथवा उपदेश, अनुशासन हमारे लिये शान्ति सुख दे (पुरन्धिः शम्) उत्कृष्ट बुद्धि शान्ति दायक हो (रायःशम् उ-सन्तु) धन भी सुख कारक हो (सुयमस्य सत्यस्य शंसः शम्) उत्तम नियन्ता का सत्य उपदेश हमें सुखकर हो (पुरुजातः अर्यमा शं नः अस्तु) अत्यन्त प्रसिद्ध न्यायकारी प्रभु हमें शान्ति सुख देने वाला हो।

प्रभु की विभूतियाँ

३—शन्नोधाता शमुधर्ता नो अस्तु शन्न उरूची भवतु स्वधाभिः। शं रोदसी बृहती शं नो अद्रिः शं नो देवानां सुहवानि सन्तु ॥ऋ० ७।३५।३॥

अर्थ—(धाता नः शम्) सब पोषक वस्तु हमें शान्ति दे। (धर्ता नः शम्) धारक प्रभु हमें सुख दे (उरूची स्वधाभिः शम् नः भवतु) भूमि अन्नों तथा जलों से हमें शान्ति दायक हो (बृहती रोदसी शं) बड़े सूर्य और अन्तरिक्ष कल्याणकारक हों (अद्रिः नः शम्) मेघ और पर्वत हमारे लिये सुख दायक हों। (देवानां सुहवानि नः सन्तु) विद्वानों के सद् उपदेश हमारे लिये हितकर हों।

ईश्वरी शक्तियाँ

४—शन्नो अग्निर्ज्योतिरनीको अस्तु शन्नो मित्रावरुणावश्विनाशम्। शन्नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु शन्न इषिरो अभिवातुवातुः ॥ ऋ० ७।३५।४॥

अर्थः—(ज्योतिः अनीकः अग्निः नः शम्) अत्यन्त प्रकाशक वा तेजस्वी अग्नि हमारे लिये शान्तिदायक हो (मित्रा वरुणौ

नः शम् अस्तु) प्राण उदान अथवा वायु और जल सुख देने वाले हों (अश्विनाशम्) उपदेशक वा अध्यापक सुखदायक हो (सुकृतां सुकृतानि नः शमसंतु) धर्मात्माओं के धर्माचरण हमें शान्ति देने वाले हों (इषिरः वातः अभिवातु) शीघ्रगामी इच्छित वायु हमारे चारों ओर बहे।

तीनों लोकों से रक्षा की प्रार्थना

५—शन्नोद्यावा पृथिवी पूर्वहूतौ शमन्तरिक्षं दृशये नो अस्तु। शन्न ओषधीर्वनिनो भवन्तु शंनो रजसस्पति रस्तु जिष्णुः॥ ऋ० ७।३५।५

अर्थ—(पूर्वहूतौ द्यावा पृथिवी नः शं) पूर्व प्रशंसित सूर्यवत तेजस्वी विद्वानो पुरुष तथा पृथिवीवत् स्त्री हमें शान्तिदायक हों (दृशये अन्तरिक्षं नः शम् अस्तु) उत्तम रीति से देखने के लिये अन्तरिक्ष हमें सुखदायक हो (वनिनः औषधीः शंनः भवन्तु) वन की औषधियां वा वृक्ष हमारे लिये शान्ति दायक हो (रजसः पति जिष्णुः नः शम्) सर्व लोकों का पति जयशील ईश्वर हमारे लिये सुख का हेतु हो।

शान्ति प्रार्थना

६—शन्न इन्द्रो वसुभिर्देवो अस्तु शमादित्येभिर्वरुणः सुशंसः। शंन रुद्रो रुद्रेभिर्जलाषः शं नस्त्वष्टाग्नाभिरिह शृणोतु॥ ऋ० ७।३५।६

अर्थ—(वसुभिः देवः इन्द्रः शंन अस्तु) पृथिवी आदि वसुओं के साथ प्रकाश रूप सूर्य हमारा कल्याण करे! अथवा शिष्यों सहित आचार्य हमें सुख दे। (आदित्येभिः सुशंसः वरुणः

शम्) तेजस्वी पुरुषों सहित प्रशंसा योग्य श्रेष्ठ राजा हमें सुख कर हो (रुद्रेभिः रुद्रः जलाषः नः शम्) दण्ड दायक शक्तियों सहित रुद्र रूप राजा शान्ति दे कर हमें सुख दे। अर्थात् उसका दण्ड संसार में शान्ति उत्पन्न करने वाला हो (ग्नाभिः त्वष्टा शंनः शृणोतु) परीक्षक विद्वान वाणियों द्वारा हमें सद् उपदेश सुनावे।

वेद तथा यज्ञ द्वारा सुख प्राप्ति

७—शंनः सोमो भवतु ब्रह्म शंनः शंनो ग्रावाणः शमु सन्तु यज्ञाः। शंनः स्वरूणां मितयो भवन्तु शंनः प्रस्वः शम्वस्तु वेदिः॥ ऋ० ७।३५।७

अर्थ—(सोमः नः शम् भवतु) चंद्र हमें सुखदायक हो (ब्रह्मशंनः) वेद ज्ञान हमें शान्ति दे (ग्रावाणः नः शं) पर्वत हमें शान्ति दें। (यज्ञाः शम् नः सन्तु) यज्ञ हमें सुख कर हो (स्वरुणां मितयो शंनः) यज्ञ सम्बन्धी सामान अथवा शब्दों का ज्ञान हमें सुखदायक हों (प्रस्वः शंनः) औषधियां अथवा संतान हमें शान्तिदायक हों (वेदिः शम् उ अस्तु) यज्ञ. कुण्ड, भूमि, स्त्री हमें शान्तिदायक हों।

शान्ति प्रार्थना

८—शंनः सूर्य उरुचक्षा उदेतु शंनश्चतस्रः प्रदिशो भवन्तु। शंनः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शंनः सिन्धवः शमु सन्त्वापः॥ ऋ० ७।३५।८

अर्थ—(उरुचक्षा सूर्यः नः शम् उद् एतु) अत्यन्त तेजस्वी सूर्य अथवा विद्वान् हमारे लिये शान्तिदायक होकर उदय को प्राप्त

हो। (प्रदिशः चतस्रः नः शं भवन्तु) सब दिशायें हमें सुख कर हों (ध्रुवयः पर्वता शंनः) स्थिर पर्वत हमारे लिये कल्याण-कारक हों (सिन्धवः आपः नः शं) समुद्र का जल शांति देने वाला हो।

अखंड व्रत

९—शंनो अदितिर्भवतु व्रतेभिः शंनो भवन्तु मरुतः स्वर्काः। शंनो विष्णुः शमु पूषा नो अस्तु शंनो भवित्रं शम्वस्तु वायुः ॥ ऋ० ७।३५।९

अर्थ—(व्रतेभिः अदितिः नः शं भवतु) सत्कर्मों से युक्त अखण्डित ब्रह्मचारी, विदुषी मातायें हमें सुख तथा शान्ति दें। (व्रतेभिः स्वर्का मरुतः शंनो भवन्तु) सत् व्रतधारी, सुविचारी मित भाषी विद्वान् हमें शान्तिदायक उपदेश दें। (विष्णुः पूषा शंनो अस्तु) सर्व व्यापक तथा पुष्टि कर्त्ता ईश्वर हमारा कल्याण करे (भवित्रम् वायु शम उ अस्तु) अंतरिक्ष जल और वायु सुखकारी हो।

ईश्वर के उपकार

१०—शं नो देवः सविता त्रायमाणः शं नो भवन्तूषसो विभातीः। शं नः पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्यः शं नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शम्भुः ॥ऋ० ७।३५।१०॥

अर्थः—(त्रायमाणः सविता देवः शं नः) सर्वोत्पादक रक्षक प्रभु हमारे लिये शान्ति दे। (विभाती उषसः शं नो भवन्तु) कान्ति तथा दीप्ति युक्त प्रभात वेलायें, हमारे लिये सुखकर हों।

(पर्जन्यः प्रजाभ्यः शं नः भवतु) मेघ संसार के लिये कल्याण-कारक हों (क्षेत्रस्य पतिः शम्भुः शं नः) संसार का नियन्ता शान्तिमय प्रभु हमें सुखद हो।

विद्या प्रचार

११—शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु शं सरस्वती सह-
धीभिरस्तु। शमभिषाचः शमुरातिषाचः शं नो
दिव्याः पार्थिवा शन्नो अप्याः ॥ऋ० ७।३५।११॥

अर्थ - (विश्वदेवा देवा नः शंभवन्तु) समस्त विद्वान् ज्ञान ऐश्वर्य वाले होकर हमें सुख दें (धीभिः सरस्वती सहमाम् अस्तु) उत्तम बुद्धि युक्त वाणी हमें सुखकारिणी हो (अभिषाचः रातिषाचः शं नः) आत्मदर्शी तथा संसार विशेषज्ञ हमें शान्ति-प्रद हों (दिव्या पार्थिवाः अप्याः शं नः) दिव्य पृथिवीस्थ पदार्थ तथा जल में उत्पन्न पदार्थ हमारे लिये कल्याणकारक हों।

सद्व्यवहार

११—शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु शं नो अर्वन्तः शमु
सन्तु गावः। शं न ऋभवः सुकृतः सुहस्ताः शंनो
भवन्तु पितरो हवेषु ॥ऋ० ७।३५।१२॥

अर्थ—(सत्यस्य पतयः नः शं भवन्तु) सत्य व्यवहार के करने वाले श्रेष्ठ जन हमें शांति दायक हों। (अर्वन्तः गावः शं नः सन्तु) गौएँ और घोड़े हमें सुख दें। (सुहस्ता ऋभवः सुकृताः शं नः) उत्तम बुद्धिमान् शिल्पी और तेजस्वी तथा धर्मात्मा पुरुष हमें शान्ति दें। (पितरः हवेषु नः शं भवन्तु) यज्ञों में हमें पितर आचार्य हमारा कल्याण करें।

अजन्मा प्रभु

१३—शं नो अज एकपाद्देवो अस्तु शं नोऽहिर्बुध्न्यः
शं समुद्रः। शं नो अपांनपात्पेरुरस्तु शं नः
पृश्निर्भवतु देवगोपाः ॥ऋ० ७।३५।१३॥

अर्थ—(एक पाद् अजः देवः नः शम् अस्तु) सत् स्वरूप अजन्मा सर्व प्रकाशक प्रभु हमें शान्ति सुख दे (अहिर्बुध्न्यः नः शम्) अन्तरिक्ष में पैदा होने वाला मेघ हमें सुख दे (समुद्रः शं) आकाश और समुद्र शान्ति दे (अपांनपात् पेरुरस्तु नः शं) जलों के बीच में पार उतारने वाली नौका सुखकर हो (देवगोपा पृश्निः शं नः भवतु) इन्द्रियों का रक्षक महान् आकाशवत् ज्ञानी हमें सुख दे।

इन्द्र राजा

१४—इन्द्रो विश्वस्य राजति शं नो अस्तु द्विपदे शं
चतुष्पदे ॥यजु० ३६।८॥

अर्थ—(इन्द्रः विश्वस्य राजति) परम ऐश्वर्यवान् ईश्वर विश्व में प्रकाशित हो रहा है वह (नः द्विपदे चतुष्पदे शं अस्तु) हमारे दो पैर वाले मनुष्य तथा चार पांव वाले पशु के लिये कल्याणकर्ता होवे।

सुख कामना

१५—शं नो वातः पवता ५ शं नस्तपतु सूर्यः। शं नः
कनिक्रदद्देवः पर्जन्यो अभिवर्षतु ॥यजु० ३६।१०॥

अर्थ—(वातः नः शं पवतं) वायु हम सब के लिये कल्याणमय होकर बहता रहे और पवित्र करे (सूर्यः शं नः तपतु) सूर्य हमारे लिये सुखकारी होकर तपता रहे। (कनिक्रदद्देवः पर्जन्यः शं नः अभिवर्षतु) गर्जता हुआ मेघ हम सब के लिये कल्याणकारी वर्षा करे।

दिन रात शान्ति

१६—अहानि शं भवन्तु नः शं रात्रीः प्रतिधीयताम्। शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या। शं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ शमिन्द्रा सोमा सुविताय शंयोः ॥यजु० ३६।११॥

अर्थः—(अहानि रात्रीः नः शं भवन्तु प्रतिधीयताम्) हम सबके लिये दिन और रात शान्ति धारण करें। (अवोभिः इन्द्राग्नी नः शं भवतां) रक्षा साधनों से युक्त इन्द्र और अग्नि हमारे लिये सुखकर हों (इन्द्रावरुणा रातहव्या नः शं) इन्द्र और जल द्वारा ग्रहण योग्य सुख हमें शान्तिदायक हो (इन्द्रा पूषणा वाजसातौ शम्) ऐश्वर्यवान् और पोषणकर्त्ता देव अन्नादि से हमें सुख प्रदान करे। (इन्द्रा सोमा सुविताय शं योः) विद्युत और औषधियां हमें सुभीता से प्राप्त हो कर सुख दें।

जल शान्ति का साधन

१७—शन्नो देवी रभिष्टय आपो भवन्तु पीतये। शंयोरभिस्रवन्तु नः ॥यजु० ३६।१२॥

अर्थ—(देवी आपः) दिव्य जल अथवा सर्व व्यापक

तेजस्वी प्रभु (अभिष्टये) हमारे मनोवाञ्छित (पीतये) पूर्ण आनन्द की प्राप्ति के लिये (शं नः) सुखकारी हों (शं यो अभिस्रवन्तु नः) कल्याण की वर्षा चहुँ ओर से हम पर हो।

शान्ति साम्राज्य

१८—द्यौः शांतिरन्तरिक्ष॑ शांतिः पृथिवी शांति रापः शांति रोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्व॑ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शांति रेधि ॥यजु० ३६।१७॥

अर्थ—(द्यौः शान्तिः अन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवी शान्ति) द्यौ लोक अंतरिक्ष लोक तथा पृथिवी शान्ति प्रदान करे। जल से, औषधियों से वनस्पतियों से हमें सुख प्राप्त हो। सब विद्वान् शान्ति उत्पन्न करें (ब्रह्मशान्ति) वेद ज्ञान शान्ति दे (सर्वं शान्ति) सब जगत् शान्ति स्थापित करे (शान्तिः एव शान्तिः) शान्ति भी सच्ची शान्ति देने वाली हो (सा शान्तिः मा एधि) इस प्रकार की सच्ची शान्ति जगत् में बढ़े।

सौ वर्ष तक स्वस्थ जीवन की प्रार्थना

१६—तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतं। शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात् ॥यजु० ३६।२४॥

अर्थ—(तत् देव हितं चक्षुः) वह ज्ञानियों का हितकारी चक्षु ज्ञान नेत्र ही (शुक्रं पुरस्तात्) शुद्ध पवित्र पहले से ही विद्य-

मान (उत् चरत) उदित है (शरदः शतं पश्येम) उस प्रभु की कृपा से हम सौ वर्ष तक देखें (जीवेम शरदः शतम्) सौ वर्ष तक जीएँ। (शरदः शतं शृणुयाम) सौ वर्ष तक सुनें। (प्रब्रवाम शरदः शतं) सौ वर्ष तक प्रवचन करें (अदीनाः स्याम शरदः शतं) सौ वर्ष तक किसी के दीन न हों (शरदः शतात् भूयः च) और सौ वर्षों से अधिक आनन्द से रहें।

शिव संकल्प

२०—यज्जाग्रतोदूर मुदैति दैवं तदुसुप्तस्य तथैवैति दूरं गमम्। ज्योतिषां ज्योति रेकन्तन्मे मनः शिव संकल्प मस्तु ॥यजु० ३४।१॥

अर्थ—(यत् जाग्रतः दूरं उदैति) जो मन जागृत अवस्था में दूर २ भागता है। और (तत् उ सुप्तस्य तथा एव एति) सुप्त अवस्था में भी वैसा ही जाता है। (दूरंगमं ज्योतिषां ज्योतिः एकम्) दूर दूर पहुँचने वाला ज्योतियों का भी ज्योति रूप एकमात्र (दैवंमे मनः) दिव्य शक्ति से युक्त मेरा मन (शिव संकल्प अस्तु) शुभ संकल्प मय होवे।

२१—येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः। यदपूर्वं यक्ष मन्तः प्रजानां तन्मेमनः शिव संकल्पमस्तु। यजु ३४।२

अर्थ—(येन) जिस मन से (अपसः मनीषिणः धीराः यज्ञे विदथेषु) सत्यकर्म निष्ठ बुद्धिमान् संयमी पुरुष यज्ञों तथा युद्ध अवसरों में (कर्माणिकुर्वन्ति) कर्म करते हैं (यत् अपूर्वं प्रजानां अन्तः यक्षम्) जो मन प्रजाओं के बीच अपूर्व पूज्य है (तत

मे मनः शिवसंकल्प अस्तु) वह मेरा मन श्रेष्ठ संकल्प वाला हो।

२२-यत् प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्त रमृतं प्रजासु। यस्मान्न ऋते किंचन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसंकल्प मस्तु। यजु० ३४।३

अर्थ—(यत् प्रज्ञानं उतचेतः) जो मन प्रकृष्ट ज्ञान वा चेतन शक्ति (धृति) धैर्य से युक्त है (प्रजासु अमृतं ज्योतिः) प्रजाओं में अमृत रूप और तेज रूप है। (यस्मात् ऋते किञ्चन कर्म न क्रियते) जिसके बिना कोई भी कर्म नहीं किया जाता। तन्मेमनः शिव संकल्पं अस्तु) वह मेरा मन शुभ विचार करने वाला हो।

२३-येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्परि गृहीत ममृतेन सर्वम्। येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिव संकल्प-मस्तु॥ यजु ३४।४

अर्थ—(येन अमृतेन) जिस अविनाशी मन से (भूतं भुवनं भविष्यत् सर्व मिदं परि गृहीतम्) भूत भविष्य वर्तमान सब कुछ जाना जाता है। (येन सप्तहोता यज्ञः तायते) जिस मन से सात ऋत्विजों द्वारा होने वाला यज्ञ फैलाया जाता है (पांच ज्ञानेन्द्रिय, बुद्धि और मन द्वारा जो यज्ञ जीवन रूपी यज्ञ चलाया जा रहा है) वह मेरा मन शुभ पदार्थों मुक्ति आदि के विचार वाला हो (सप्त होता=सात छिद्र)

२४-यस्मिन्नृचः साम यजूꣳषि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथना भाविवाराः। यस्मिंश्चित्तꣳ सर्व मोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्प मस्तु॥ यजु ३४।५

अर्थ—(यस्मिन् ऋचः साम यजूंषि) जिस मन में ऋग् यजु साम अर्थात् त्रयीविद्यामय चारों वेद (रथ नाभौ आराः) रथनाभि आरों के समान (प्रतिष्ठिताः) स्थित हैं (यस्मिन् प्रजानां सर्वम् ओतं) जिस मन में सब प्रजाओं का चित्त ओत प्रोत हुआ है वह मेरा मन वेदादि सत्य शास्त्रों के प्रचार रूप संकल्प वाला हो।

२५—सुषारथि रश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव। हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिव संकल्प मस्तु ॥ ३४।६

अर्थ—(यत् मनुष्यान् सुषारथिः अश्वानिव नेनीयते) जो मन मनुष्यों को उत्तम सारथी सदृश घोड़ों को चलाने समान इधर उधर ले जाता है। (अभीशुभिर्वाजिन इव) जो मनुष्यों के इन्द्रिय रुपी घोड़ों को लगाम द्वारा चलाता है। (हृत् प्रतिष्ठं अजिरं जविष्ठं) जो हृदय में रहता हुआ अजर और वेगवान है वह मेरा मन शुभ संकल्प वाला हो।

गो आदि पशुओं के लिए सुख कामना

२६—स नः पवस्व शङ्गवे शंजनाय शमर्वते शंराजन्नोषधीभ्यः ॥ सामवेद उत्त० १।३

अर्थ—हे (राजन्) प्रकाशमान् ईश्वर ! स नः गवे शम्) आप हमारे गौ आदि उपकारी पशुओं का कल्याण करें (जनाय शम् अर्वते शम्) मनुष्यों के लिये और घोड़ों के लिये सुख दायक हो (ओषधीभ्यः शम् पवस्व) ओषधियां हमारे लिये शान्ति

देवें। अर्थात् प्रभु आप की अपार कृपा से हम इन उपरोक्त वस्तुओं की रक्षा निमित्त सामर्थ्य युक्त होवें।

सर्वत्र निर्भयता

२६—अभयंनः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावापृथिवी उभेइमे। अभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादधरादभयं नो अस्तु॥अथर्व २६।१५।५॥

अर्थ—(अंतरिक्षं नः अभयं करति) हे प्रभु हमें अंतरिक्ष लोक अभय प्रदान करे (उभेइमे द्यावापृथिवी अभयं) यह दोनों द्युलोक और पृथिवी हमें अभय दें (पश्चात् पुरस्तात् उत्तरात् अधरात् नः अभयं अस्तु) आगे पीछे ऊंचे नीचे (पूर्व पश्चिम दक्षिण उत्तरादि दिशायें) से हमें भय न हो।

मित्रों से निर्भयता

२८—अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं पुरोयः। अभयं नक्त मभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु॥ अथर्व १६।१५।६

अर्थ—हे प्रभु (मित्रात् अभयं अमित्रात् अभयं) हमें मित्र और शत्रु से अभय हो (ज्ञाताद् अभयं पुरोयः अभयं) जाने हुये पदार्थ से निर्भयता हो (नक्तं अभयं दिवानः) दिन और रात से भय न हो (सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु) सब दिशायें मेरी मित्र हों।

—:०:—

अथ ऋत्विग्वरणम्

यजमान पुरोहित से प्रार्थना करे। (ओमावसो: सद्ने सीद) हे पुरोहित जी! आप कृपया यज्ञ के स्थान इस आसन पर विराजिये।

पुरोहित उत्तर देवे। (ओ३म् सीदामि) मैं बैठता हूं। पुनः यजमान कहे (अहमद्योक्तकर्म करणाय भवन्तं वृणे) मैं आज अमुक कर्म कराने के निमित्त आपसे विनयपूर्वक प्रार्थना करता हूं। पुरोहित उत्तर देवे। (वृतोऽस्मि) मुझे स्वीकार है।

आचमन मन्त्राः

ओ३म् अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा ॥

(हे प्रभु यह जल अमृत रूप सब का आश्रय है यह मेरा कथन शुभ हो।

ओ३म् अमृतापिधानमसि स्वाहा।

अर्थ—हे अमर जल तू सब का धारक पोषक है।

ओ३म् सत्यंयशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा।

॥मानव गृह्य सूत्र १।९॥

अर्थः—(मयि) मुझमें (सत्यं यशः श्रीः श्रयताम्) सत्य यश लक्ष्मी ईश कृपा से विराजमान हो।

अंगस्पर्श मन्त्राः

ओं वाङ्म आस्ये अस्तु ॥

हे प्रभु मेरे मुख में वाक् इन्द्रिय स्थित हो ।

ओं नसोर्मे प्राणोऽस्तु ।

हे प्रभु मेरे दोनों नासिकाओं में प्राण स्थिर रहें ।

ओं अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु ।

हे प्रभु मेरी आंखों में देखने की शक्ति हो ।

ओं कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु ।

हे प्रभु मेरे कानों में श्रवण शक्ति हो ।

ओं बाह्वोर्मे बलमस्तु ।

हे प्रभु मेरी दोनों भुजाओं में बल हो ।

ओं ऊर्वोर्मेऽओजो अस्तु ।

हे प्रभु मेरी जंघाओं में ओज हो ।

ओं अरिष्टानि मेऽङ्गानि तनूस्तन्वा मे सह सन्तु ।

।पारस्कर गृह्यसूत्र १।३।५॥

मेरे इस शरीर के सब अंग नीरोग तथा अबाधित हों ।

अग्न्याधान

१—ओ३म् भूर्भुवः स्वः ।

हे प्रभु आप प्राण स्वरूप दुःख विनाशक और सुख स्वरूप हों ।

ओ३म् भूर्भुवः स्वर्द्यौरिव भूम्ना पृथिवीव वरिम्णा। तस्यास्ते पृथिवि देवयजनि पृष्ठेऽग्नि मन्नादमन्नाद्यायादधे ॥ यजु० ३।५॥

(भूर्भुवः स्वः) हे सच्चिदानन्द ईश्वर ! (द्यौः इव भूम्ना) द्युलोक के समान ऐश्वर्य से युक्त होऊं तथा (पृथिवी इव वरिम्णा) पृथिवी के समान अच्छे गुण [विशालता, उदारता आदि] वाला बनूँ। और हे (देव यजनि पृथिवी) पृथिवी ! जिसमें विद्वान् यज्ञ करते हैं। (ततस्य पृष्ठे, तेरी उस पीठ पर (अन्नादम् अग्निम्) अन्न भक्षक अग्नि को (अन्नाद्याय आदधे) भक्षण योग्य अन्नोत्पत्ति के लिये मैं यजमान स्थापित करता हूं।

२—ओं उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्ते स ॐ सृजेथामयं च। अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत ॥यजु० १५।५४॥

हे (अग्ने) भौतिक अग्नि तू (उद्बुध्यस्व) ऊपर उठो व प्रकट होओ। (प्रति जागृहि) खूब प्रकाशित हो अथवा प्रतिदिन यजमान को सावधान करते रहो। (त्वमिष्टा पूर्ते) यज्ञार्थ वा धर्मार्थ आदि शुभ कर्मों को (सं सृजेथाम्) सम्पादन करो (अस्मिन् सधस्थे) और इस यज्ञ मण्डप में (अधि उत्तरस्मिन्) और इससे भी उत्तम स्थान में (विश्वे देवा यजमानश्च सीदत) सब विद्वान् और यजमान बैठें।

३—ओं अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्द्धस्व

चेद्धवर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्म वर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा । इदमग्नये जातवेदसे—इदन्नमम ॥

॥आश्वलायन गृह्य सूत्र १।१०।१२॥

अर्थ—हे (जात वेदः) अग्ने अयं इध्मः) यह काष्ठ (ते आत्मा) तेरा शरीर है । (तेन इध्यस्व वर्द्धस्व च) इस काष्ठ से प्रदीप्त हो और वृद्धि को प्रप्ति हो (अस्मान् च इत् हि) और हम को भी अवश्य (प्रजया पशुभिः वर्धय) पुत्र पौत्रादि तथा पशुओं से बढ़ा (ब्रह्मवर्चसेन) ब्रह्मज्ञान से (अन्नाद्येन समेधय) अन्नादि से अच्छे प्रकार बढ़ा (स्वाहा) हमारा दिया हुआ हवि सफल हो (इदमग्नये जातवेदसे इदन्नमम) यह सब कुछ हवि अग्नि के लिये है, मेरे लिये नहीं है ।

४—ओं समिधाग्निंदुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम् । आस्मिन् हव्या जुहोतन स्वाहा । इदमग्नये इदन्नमम ॥यजु० ३।१

अर्थ—हे मनुष्यो तुम (सम् इधा) भली प्रकार से प्रदीप्त करने के साधन लकड़ियों से (अतिथिं अग्निं बोधयत) अतिथि रूप अग्नि को खूब प्रकाशित किया करो और (दुवस्यत घृतैः) घृत से सेवन करो (आस्मिन् हव्या आजुहोतन) इस अग्नि में सब प्रकार के शाकल्य को डालो ।

५—ओंसुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्रं जुहोतन । अग्नये जातवेदसे स्वाहा । इदमग्नये जातवेदसे इदन्नमम ।

यजु० ३।२

(इन दोनों मन्त्रों से दूसरी काष्ठ में घृत लगा कर हवन कुण्ड में डालें)

अर्थ—हे मनुष्यो (सुसमिद्धाय) अच्छी प्रकार से प्रदीप्त (शोचिषे) प्रज्वलित (जातवेदसे) सर्व व्यापक (अग्नये) अग्नि में (तीव्रं घृते) शुद्ध घृत को (जुहोतन) होमो ।

६—ओं तन्त्वा समिद्भिरङ्गिरो घृतेन वर्द्धयामसि। बृहच्छोचा यविष्ठ्य स्वाहा। इदमग्नयेऽङ्गिरसे इदन्नमम ॥यजु० ३।३

इससे तीसरी समिधा डालें।

अर्थ—(अङ्गिरः) हे गमन शील अग्नि (यविष्ठ्य) अति बलवान (बृहत्) बड़ी तेजस्वी (शोच) प्रकाशित अथवा शुद्ध करने वाली (तन्त्वा समिद्भिः घृतेन वर्द्धयामसि) तुझ अग्नि को घृत युक्त समिधाओं से बढ़ाते हैं।

७—ओं अयन्तइध्मआत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्द्धस्व चेद्धवर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन-समेधय स्वाहा। इदमग्नये जातवेदसे इदन्नमम

इससे पांच बार घृताहुति देवें।

अर्थ—हे अग्ने यह घृताहुति तेरा जीवनाधार है। इससे तू बढ़ और हमें भी पुत्रादि, पशुओं, ब्रह्मज्ञान तथा अन्नादि से बढ़ा।

जल प्रसेचनम्

८—ओं अदितेऽनुमन्यस्व (इससे पूर्व)

हे अखंडनीय प्रभु अनुकूल मति दीजिये

९—ओ३म् अनुमतेऽनुमन्यस्व (पश्चिम की ओर)

हे ज्ञान स्वरूप ! हमें हितकारिणी बुद्धि दें।

१०—ओं सरस्वत्यनुमन्यस्व (उत्तर में)

हे विद्या के भंडार प्रभु ! हमें श्रेष्ठ विद्या दें। गोभिल ३।१-३

११—ओं देव सवितः प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय। दिव्यो गंधर्वः केतपूः केतन्नः पुनातु। वाचस्पति-र्वाचंनः स्वदतु ॥यजु० ३०।१

अर्थ—(देव सवितः) हे सर्वोत्पादक प्रकाशक ईश्वर (भगाय यज्ञं प्रसुव) ऐश्वर्य के लिये यज्ञ को उत्पन्न कीजिये (यज्ञपतिं प्रसुव) और यज्ञपति यजमान को भी प्रेरणा दीजिये (दिव्यः गंधर्वः केतपूः केतम् नः पुनातु) शुद्ध वाणी को धारण करने वाले और बुद्धि को पवित्र करने वाले हमारी बुद्धि को पवित्र करो। (वाचस्पतिः वाचंनः स्वदतु) वाणी के रक्षक प्रभु आप कृपया हमारी वाणी को मधुर कोमल बनाओ (इस मन्त्र से वेदी के चारों ओर जल छिड़को)

आघारावाज्याहुति

१—ओं अग्नये स्वाहा इदमग्नये इदन्नमम यजु० २२।२७

(इस मन्त्र से उत्तर भाग में आहुति दें)

प्रकाश स्वरूप प्रभु व भौतिक अग्नि के लिये यह सुन्दर आहुति है, मेरी नहीं।

२—ओं सोमाय स्वाहा इदंसोमाय, इदन्नमम ।यजु. २२।२७

(दक्षिण भाग में आहुति दें)

शान्ति स्वरूप परमात्मा अथवा चन्द्रजलादि के लिये, सुन्दर आहुति है, मेरे लिये नहीं।

३---ओं प्रजापतये स्वाहा इदंप्रजापतये इदन्नमम ॥ २२ २०

प्रजापति ईश्वर सूर्य वा गृहस्थी के लिये यह श्रेष्ठ आहुति है, मेरे अपने लिये नहीं है।

४—ओं इंद्राय स्वाहा इदं इन्द्राय इदन्नमम ।यजु०२२।२७

ऐश्वर्य रूप प्रभु के लिये है, मेरी नहीं।

(इन दोनों मंत्रों से कुण्ड के मध्य में आहुति दें)

व्याहृतिआहुति

१ – ओं भूरग्नये स्वाहा। इदमग्नये इदन्नमम

ओं भुवर्वायवे स्वाहा। इदंवायवे-इदन्नमम

ओं स्वरादित्याय स्वाहा। इदमादित्याय इदन्नमम

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा। इदमग्निवायवादित्येभ्यः इदन्नमम (पारस्कर १।५३-४)

अर्थ—सर्वाधार प्राणों से भी प्रिय ज्ञानस्वरूप प्रभु के लिये यह आहुति है। दुखों को दूर करने वाले वायु समान व्यापक प्रभु के निमित्त यह आहुति है। सुख स्वरूप प्रकाश स्वरूप ईश्वर के लिये यह आहुति है।

उपर्युक्त सब गुणों को रखने वाले प्रभु के निमित्त यह आहुति है अर्थात् पृथिवी अंतरिक्ष तथा द्यौलोक और उन में वास करने वाले अग्नि देव, वायु देव तथा सूर्य देव की अनुकूलता के लिये यह आहुति है।

स्विष्ट कृत् आहुति (मिष्टान्न आहुति)

ओं यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरं। अग्निष्टत् स्विष्ट कृद्विद्यात्सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे। अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्व प्रायश्चित्ताहुतीनां कामानां समर्धयित्रे सर्वान्नः कामान् समर्धय स्वाहा। इदमग्नये स्विष्टकृते इदन्नमम। शतपथ १४।९।४।२४

अर्थ—(यत् अस्य कर्मणः अति अरीरिचं) जो इस कर्म में अधिक किया गया हो। (यत् वा न्यूनं इह अकरम्) अथवा न्यूनता रह गई हो। (स्विष्टकृत् अग्निः) शुभ इच्छाओं को पूर्ण करने वाला प्रभु (सर्वंसु-इष्टं विद्यात्) मेरी मनःकामनाओं को जानता है। तत् मे सुहुतं करोतु) वह प्रभु मेरे लिये इस कृत्य को सुहुत वा सुफल करे (स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्व प्रायश्चित्त आहुतीनां कामानां समर्धयित्रे अग्ने) शोभन यज्ञसम्पादक, सुहुत ग्रहण करने वाले और सब प्रायश्चित्त की आहुतियों को बढ़ाने हारे और सब कामनाओं को पूर्ण करने वाले अग्नि रूप परमात्मा के लिये सुहुत हो। हे प्रभु आप हमारे सब मनोरथों को पूर्ण कीजिये। यह आहुति प्रभु समर्पित है, मेरे लिये नहीं।

प्राजापत्याहुति (मन में मौन रह कर)

ओं प्रजापतये स्वाहा ॥ यजु० २२।३२

प्रजा के पालन करने हारे ईश्वर के लिये सुहुत हो।

चार आज्याहुति

१—ओं भूर्भुवः स्वः। अग्न आयूंषि पवस आसुवोर्ज्जमिषं च नः। आरे बाधस्व दुच्छूनां स्वाहा। इदमग्नये पवमानाय इदन्नमम॥ ऋ० ९।६६।१९

अर्थ—(अग्ने) हे अग्रणी, हे ज्ञान वान् प्रभु (नः आयूंषि) हमारी आयुओं जीवनों को (अवसे) रक्षा कर (नः ऊर्जमिषं च आसुव) हमें बल पराक्रम अन्न प्रदान कर (दुच्छूनाम् आरे बाधस्व) विषैले कीटाणुओं को हम से पृथक् रखकर पीडित कर।

२—ओं भूर्भुवः स्वः। अग्निर्ऋषिः पवमानः पांचजन्यः पुरोहितः तमीमहे महागयं स्वाहा—इदमग्नये पवमानाय इदन्नमम॥ ऋ० ९।६६।२०

अर्थ—(अग्निः ऋषिः पवमानः पांचजन्यः) ज्ञानवान्, सर्व व्यापक शोधक प्रभु पंचजनों का हित कारक है [ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र तथा निषाद] (पुरोहितः) सबका हित करने वाला समस्त अध्यक्ष साक्षीवान है (तम् महागयम् ईमहे) उस महान् गृह समान सर्वाश्रय प्रभु को हम प्राप्त हों।

३—ओं भूर्भुवः स्वः। अग्नेपवस्व स्वपा अस्मे वर्चः सुवीर्यम्। दधद्रयिं मयि पोषम्॥ ऋ० ९।६६।२१

अर्थ—हे (अग्ने) तेजस्विन् (स्वपा अथवा सु-अपाः) सुन्दर काम करने वाला वा स्वयं ऐश्वर्यों का स्वामी (अस्मे वर्चः) हमें तेज (सुवीर्यं पवस्व) उत्तम वीर्य प्रदान कर (मयिरयिं

पोषं दधत्) मुझे धन, पुत्र पशु आदि तथा शरीर की पुष्टि धारण करा।

४—ओं भूर्भुवः स्वः । प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परिता बभूव । यत्कामास्ते जुहुमस्तन्न अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् । इदं प्रजापतये इदन्नमम ॥ ॥ऋ० १०।१२१।१०॥

अर्थ—हे (प्रजापते) सर्व प्रजा पालक ईश्वर ! (त्वत् अन्यः) तेरे से कोई और भिन्न (ता विश्वा जातानि) इन सब उत्पन्न हुये पदार्थों का (नपरितावभूव) तिरस्कार नहीं करता है (यत् कामाः ते जुहुमः) जिस कामना से तेरे लिये आहुति दें (तत् नः अस्तु) वह हमारी मनोकामना सिद्ध हो। (वयं पतयो रयीणाम् स्याम) हम धन ऐश्वर्यों के स्वामी बनें। यह आहुति प्रजापालक प्रभु के लिये है, मेरे लिये नहीं।

अष्ट आज्याहुति (प्रायश्चित्त आहुति)

१—ओं त्वन्नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडो अवयासिसीष्ठाः । यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषांसि प्रमुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा इदमग्नीवरुणाभ्याम् इदन्नमम ।ऋ० ४।१।४॥

अर्थ—हे अग्ने प्रकाशमान् प्रभु वा ज्ञानवान् अग्रणी नेता (त्वं विद्वान्) तू हम में से विद्वान् है (यजिष्ठः) पूजनीय (वह्नि-तमः) अत्यन्त प्राप्ति कराने वाले (शोशुचानः) अत्यन्त तेजस्वी (वरुणस्य देवस्य) श्रेष्ठ देव के (हेडः नः अवयासिसीष्ठा) क्रोध

और अनादर के भावों को हमसे दूर कर दीजिये। तथा (विश्वा द्वेषांसि अस्मत् प्रभुमुग्धि) हमसे सारे द्वेषयुक्त कार्यों को दूर कर दीजिये।

२—ओं स त्वन्नो अग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ। अवयक्ष्व नो वरुणं रराणो वीहि मृडीकं सुहवो न एधि स्वाहा। इदमग्निवरुणाभ्याम् इदन्नमम ॥ऋ० ४।१।५॥

(अग्ने) हे ज्ञानवान् प्रभु (त्वं नः सः ऊती नः अवमः तुम हमारे बीच समीपता से रक्षा करने वाले हो। (अस्याः उषसः विउष्टौ नेदिष्ठः भव) इस प्रभात बेला में विशेषतया हमारे समीप हो (नः वरुणं रराणः अवयक्ष्व) हमें श्रेष्ठ विद्वानों का सत्संग प्राप्त कराओ (मृडीकं वीहि) और हमारे लिये सुख-कारी ज्ञान को प्रकाशित कर (नः सुहवः एधि) आप हमें भले प्रकार प्राप्त हैं।

३—ओं इमं मे वरुणश्रुधि हवमद्या च मृडय। त्वामवस्यु राचके स्वाहा। इदं वरुणाय इदन्नमम ॥

॥ऋ० १।२५।१६॥

अर्थ—हे (वरुण) सर्व श्रेष्ठ वरणीय परमेश्वर (इमं मे हवम् अद्याश्रुधि) आज मेरी इस स्तुति को आप श्रवण करें (च मृडय) और सुखी करो। (अवस्युः त्वम् आचके) अपनी रक्षा निमित्त आपको पुकारता हूँ।

४—ओं तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यज-

मानो हविर्भिः । अहेडमानोवरुणेह बोध्युरुशंस मान आयुः प्रमोषीः स्वाहा इदं वरुणाय इदन्नमम ॥

॥ऋ० १।२४।११॥

अर्थ—(वरुण: उरुशंसः) हे सर्वथा प्रशंसनीय जगदीश्वर (यजमान: हविर्भि: तत् आशास्ते) यजमान हवियों द्वारा जिन अभिलाषा योग्य सुख की कामना करता है (ब्रह्मणा) वेद मन्त्रों द्वारा (वन्दमान:) तेरी स्तुति करता हुआ मैं भी (तत् त्वा यामि उन्हीं उत्तम पदार्थ की आप से याचना करता हूं । (अहेडमान:) में आप का निरादर कभी न करूं आप कृपया (इह बोध) इस संसार में मुझे बोध युक्त कीजिये (न: आयु मा प्रमोषी: हमारी आयु को अपहरण न कीजिये अर्थात् मेरी आयु व्यर्थ मत जावे और मेरा आत्मा शीघ्र आप की भक्ति से प्रकाशित हो जावे ।

५—ओं ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञिया पाशा वितता-महान्तः । तेभिर्नो अद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा । इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यः इदन्नमम ॥ कात्यायन श्रौत सूत्र २५।१।११

अर्थ—(वरुण) हे श्रेष्ठेश्वर (येते शतं सहस्रं) जो वह सैंकड़ों और हजारों (यज्ञिया:) यज्ञ विषय में (वितता:) फैले हुये (महान्त: पाशा:) बड़े २ विघ्न हैं (तेभि: न: अद्य) उनसे हमको आज (सविता उत विष्णु:) सर्वोत्पादक और

व्यापक आर (विश्वे स्वर्काः मरुतः) सब पूजनीय विद्वान् लोग (मुञ्चन्तु) छुड़ावें। यह आहुति वरुण, सविता विष्णु नामों वाले परमात्मा तथा विद्वानों के लिये है, मेरी नहीं।

६—ओं अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्व मयासि। अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषजᳬ स्वाहा। इदमग्नये अयसे इदन्नमम॥

कात्यायन श्रौत सूत्र २५।१।१२

अर्थ—(अग्ने) हे प्रकाश स्वरूप भगवन् (त्वं अयाः) आप सर्व धर्म व्यापक हो (च) और (अनभिशस्तिपाश्च असि) कुत्सित, पाप कर्म करने वाले को पवित्र बनाने वाले हो (सत्यम् इत अयासि) यह वस्तुतः सत्य है कि आप कल्याण कारक हो (अया नः यज्ञं वहासि) हे सर्वत्र प्राप्त प्रभु आप हमारे यज्ञ को सफल कीजिये (अया नः धेहि भेषजं स्वाहा) हे सुखप्रद प्रभु आप हमें सुखकारक औषध प्रदान करो। मैं यज्ञ के निमित्त सब कुछ बलिदान कर सकता हूं।

७—ओं उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं विमध्यमं श्रथाय। अथा वयमादित्य व्रते तवानागसोऽदितये स्याम स्वाहा। इदं वरुणायाऽदित्यायाऽदितये च इदन्नमम॥

ऋ० १।२४।१५

अर्थ—(वरुण) हे स्वीकार योग्य भगवान्! (अस्मत्) हम से (अधमम्) आलस्य, मिथ्या भाषणादि अधम (मध्यमं)

राग द्वेष निन्दा लोभ अहंकार आदि मध्यम तथा (उत्तमम्) ममता. कीर्ति यश आदि उत्तम प्रकार के (पाशम्) बन्धनों को (वि-अव-श्रथाय) भली भान्ति दूर कीजिये (अथ आदित्य वयम् तव व्रते) और हे अखण्ड प्रभु हम तेरी आज्ञा में रहते हुये (अनागसः अदितये स्याम) पाप रहित हो कर मुक्ति के आनन्द को प्राप्त करें। तीन प्रकार के दुख अर्थात् आध्यात्मिक, आधिभौतिक तथा आधिदैविक बंधनों को शिथिल करो।

८—ओं भवतन्नः समनसौ सचेतसावरेपसौ। मा यज्ञं ᳬ हि ᳬ सिष्ठं। मा यज्ञपतिं जातवेदसौ शिवौ भवतमद्य नः स्वाहा। इदं जातवेदोभ्यां-इदन्नमम ॥ यजु० ५।३

अर्थ—हे प्रभु (नः अरेपसौ समनसौ सचेतसौ भवतम्) हमारे मध्य पापरहित, उत्तम मनवाले, श्रेष्ठ ज्ञान वाले स्त्री-पुरुष हों (यज्ञम् मांहिंसिष्ठम्) जो यज्ञ का लोप न करें (मा यज्ञपतिम्) यज्ञों के रक्षक भी अपीड़ित हों (जातवेदसौः अद्य नः शिवौ भवतम्) वेद पारंगत विद्वान् आज हमें स्वसदुपदेशों से शान्त करें अथवा हमारा कल्याण करें।

प्रातर्होममंत्राः

१—ओ३म् सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा ॥ यजु. ३।९

अर्थ—(सूर्य) सर्वव्यापक, सर्वप्रकाशक, ज्ञानस्वरूप प्रभु (ज्योतिः ज्योतिः) प्रकाशकों का प्रकाशक है (सूर्यः स्वाहा) उस जगत प्रकाशक प्रभु की प्रसन्नता तथा आज्ञा पालनार्थ यह आहुति है।

२—ओ३म् सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ॥यजु० ३।९

अर्थ—(सूर्य) सूर्य वा ज्ञान स्वरूप प्रभु (वर्चः) ब्रह्मयज्ञ का देने वाला है (ज्योतिः वर्चः स्वाहा) परमात्मा की वेद ज्योति सर्वत्र फैली हुई है। यह बिलकुल सत्य बात है।

३—ओं ज्योतिः सूर्य्यः सूर्य्यो ज्योतिः स्वाहा। यजु०३।९

अर्थ—(ज्योतिः सूर्यः) ज्योति स्वरूप प्रभु सब का आत्मा है (सूर्यः ज्योतिः) उसी सर्व व्यापक प्रभु का प्रकाश सारे संसार में चमक रहा है अथवा वह ज्योति स्वरूप स्वयं प्रकाशक सूर्य का भी सूर्य है। उसी ज्योति स्वरूप की प्राप्ति के लिये यह सुन्दर आहुति है।

४—ओ३म् सजूर्देवेन सवित्रा सजूरुषसेन्द्रवत्या जुषाणः सूर्यो वेतु स्वाहा ॥ यजु० ३।१०

अर्थ— देवेन सवित्रा सजूः) दैवी उत्पादक शक्तियों के साथ (उषसा इन्द्रवत्या सजूः) ऐश्वर्य दात्री उषा के साथ (सूर्यः जुषाणः वेतु) सूर्य इस आहुति को प्राप्त हो।

सायंकाल हवन करने के मंत्र

१—ओ३म् अग्नि ज्योतिः ज्योतिरग्निः स्वाहा ॥यजु.३।९

अर्थ—सर्वव्यापक ज्योतिस्वरूप प्रभु ही प्रकाशकों का प्रकाशक है उस अग्निमय भगवान् की प्रसन्नता के लिये यह आहुति है।

२—ओं अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ॥यजु० ३।९

अर्थ—ज्ञान स्वरूप प्रभु का ही यह वेद ज्ञान है जो संसार में ज्योति है वह प्रभु का ब्रह्म तेज है यह नितान्त सत्य है।

३—ओ३म् अग्नि र्ज्योतिः ज्योति रग्निः स्वाहा ।यजु.३।६

इस मन्त्र को मन में बोल के आहुति देवें।

ज्योति स्वरूप प्रभु सर्व प्रकाशक है उसके लिये ही यह आहुति है।

४—ओ३म् सजूर्देवेन सवित्रा सजूः रात्रेन्द्रवत्या जुषाणो अग्निर्वेतु स्वाहा ।।यजु० ३।१०।।

अर्थ—(अग्नि) यह अग्नि परमात्मा (देवेन सवित्रा सजूः) दिव्य प्रकाशक, उत्पादक तथा प्रेरक शक्तियों के साथ (रात्री इन्द्र वत्या) चमकती हुई रात्री के साथ (जुषाणः वेतु) इस आहुति को प्राप्त हो अथवा संकल्पात्मक अग्नि दीप्तिमान् रात्रि के साथ हम को प्राप्त हो।

प्रातः सायं होम मन्त्राः

व्याहृत्याहुतियाँ

१—ओ३म् भूरग्नये प्राणाय स्वाहा। इदमग्नये प्राणाय इदन्नमम।

अर्थ—(भूः) प्राण प्रिय प्रभु और (अग्नये) सर्व व्यापी गति शील अग्नि के लिये (प्राणाय) प्राण वायु की शुद्धि के लिये (स्वाहा) यह सुन्दर आहुति है। यह केवल मेरे लिये नहीं अपितु सारे संसार के जीवन के लिये है।

२—ओ३म् भुवर्वायवेऽपानाय स्वाहा। इदं वायवे अपानाय इदन्नमम ॥

अर्थ—(भुवः) दुःख विनाशक प्रभु (वायवे) जीवन प्रद (अपानाय) अपान वायु की शुद्धि के लिये (स्वाहा) सुन्दर आहुति है।

३—ओ३म् स्वरादित्याय व्यानाय स्वाहा। इदमादित्याय व्यानाय इदन्न मम ॥

अर्थ—(स्वः) सुख स्वरूप प्रभु (आदित्याय) सूर्य के लिये व्यान वायु की शुद्धि के लिये यह आहुति है।

४—ओं भूर्भुवः स्वरग्नि वाय्वादित्येभ्यः प्राणापान व्यानेभ्यः स्वाहा। इदं प्राणापान व्यानभ्यः, इदन्नमम ॥

अर्थ—(भूर्भुवः स्वः) प्राण स्वरूप, दुख विनाशक सुख स्वरूप प्रभु की प्रसन्नता के लिये अग्नि वायु और सूर्य की किरणों की पवित्रता तथा प्राण अपान व्यान की शुद्धि के निमित्त यह सुन्दर आहुति है। मेरे लिये नहीं।

५—ओं आपोज्योतीरसोऽमृतंब्रह्म भूर्भुवः स्वरों स्वाहा ॥

अर्थ—(आपः) जल के समान शान्तिदायक (ज्योतिः) प्रकाश स्वरूप ज्ञान स्वरूप (रसः) आनन्द रस का दाता (अमृतं)

मुक्तिप्रदाता प्रभु (ब्रह्म) सब से बड़ा है। (भूर्भुवः स्वः ओं स्वाहा) सच्चिदानन्द स्वरूप ओ३म् के लिये यह आहुति है।

६—ओं यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते। तया मामद्य मेधयाऽग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा॥ यजु. ३२।१४

अर्थ—(अग्ने) हे प्रकाश स्वरूप प्रभु (यां मेधां देवगणाः पितरः चउपासते) जिस मेधा बुद्धि (सात्विक बुद्धि) को विद्वान् तथा रक्षक लोग प्राप्त होते हैं (तया मेधया) उसी बुद्धि वा धन से (माम् अद्य मेधाविनं कुरु स्वाहा) आज मुझे प्रशंसित बुद्धि वाला कीजिये। यह मेरी सत्यवाणी है।

७—ओं विश्वानि देव सवितु र्दुरितानि परासुव। यद्भद्रं तन्न आसुव स्वाहा॥ यजु० ३०।३

अर्थ (हे) (देव) उत्तम गुणकर्म स्वभाव युक्त (सवितः) सर्वोत्पादक तथा सर्व प्रेरक प्रभु (विश्वानि दुरितानि परासुव) सब दुष्ट आचरण वा दुर्गुणों को दूर कीजिये और (यत् भद्रं तत् नः आसुव) जो कल्याणकारी गुण युक्त धर्म वा आचरण है वह हम को प्राप्त कराइये।

८—ओं अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठांते नम उक्तिं विधेम। यजु० ४०।१६

अर्थ—(अग्ने नय सुपथा) हे ज्ञान स्वरूप प्रभु हमें शुभ मार्ग (देवयान) पर (राये) सुख प्राप्ति धनैश्वर्य अथवा मुक्ति के लिये चला (अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्) आप हमारे सम्पूर्ण कर्मों को जानते हैं (अस्मत् युयोधि जुहुराणम्) हम से कुटिलता युक्त पापों को दूर कर दे। (भूयिष्ठाम् ते उक्ति नमः विधेम) हम बार २ आपके लिये प्रशंसा युक्त नमस्कार किया करें।

जन्मदिवस पद्धति

विधि—जिस तिथि को बालक अथवा नर नारी का जन्म दिन हो उस दिन प्रातः ही स्नान कर शुद्ध स्वदेशी वस्त्र तथा यज्ञोपवीत पहनें। पुनः ईश्वर स्तुति प्रार्थना स्वस्ति वाचन तथा शान्ति पाठ के मन्त्रों द्वारा ईश्वर की आराधना करें। यदि हो सके तो कोई विद्वान् इनका भावार्थ भी सुना दे।

तत्पश्चात् अग्न्याधान आदि क्रिया करके बृहत् होम यज्ञ करें। उसके पश्चात् निम्न मन्त्रों द्वारा आहुतियां दी जावें और मन्त्रों का भावार्थ भी सुना दिया जावे।

१—ओ३म् उप प्रियं पनिप्नतं युवानमाहुतिवृधं। अगन्म बिभ्रतो नमो दीर्घमायुः कृणोतु मे॥ अथर्व० ७।३२।१

भावार्थ—हे प्रिय स्तुति योग्य ईश्वर! मेरी दीर्घ आयु कर आज जैसे मैं आहुति द्वारा इस यज्ञ की अग्नि को बढ़ा रहा हूँ; वैसे ही मैं सात्विक अन्न भक्षण करके तरुण बनूं और अपने जन्म दिन निरंतर मनाता रहूं।

२—ओ३म् जीवास्थजीव्यासं सर्वमायुर्जीव्यासम्। उपजीवास्थोपजीव्यासं सर्वमायुर्जीव्यासम्। संजीवास्थ संजीव्यासं सर्व मायुर्जीव्यासम्। जीवलास्थ जीव्यासं सर्वमायुर्जीव्यासम्॥ अथर्व १९।६९।१-२-३-४

शब्दार्थ—हे बालक तू सौ वर्ष तक सब प्रकार से उन्नत होता हुआ सौ शरद् हेमन्त तथा वसन्तादि ऋतुओं में आनन्द लेता हुआ सुख शान्ति पूर्वक जी।

हे मित्र मण्डली और जलों के समान शान्त आप्त जनों! आप मुझे ऐसा आशीर्वाद दें कि जिस से मेरा जीवन दीर्घ हो। मैं अपने जीवन को और भी अधिक बढ़ाने में समर्थ होऊं। मैं उत्तम रीति से जीवन धारण करूं। आप जीवन प्रद हो अत: मुझे भी तुम जीवन तत्त्व प्रदान कराओ।

३—ओ३म् इन्द्र जीव सूर्य जीव देवा जीवा जीव्यास महम्। सर्वमायुर्जीव्यासम् ॥अथर्व १६।७०।१॥

हे ऐश्वर्यवान् परमेश्वर या वायो तू हमें जीवन धारण करा और हे देवगण! मैं दीर्घ जीवन तक जीता रहूं।

४—ओ३म् शतंजीव शरदोवर्धमानः शतंहेमन्ताञ्छतमु वसन्तान्। शतमिन्द्राग्नी सविता वृहस्पतिः शतायुषा हविषेमं पुनर्दुः। ऋ० १०।१२।१६१।४

भावार्थ—प्रत्येक मनुष्य को सौ वर्ष की पूर्ण आयु प्राप्त करने का यत्न करना चाहिये। इन्द्र विद्युत् चिकित्सा, अग्निचिकित्सा, सूर्य किरणचिकित्सा वृहस्पति—मानसचिकित्सा तथा हवनचिकित्सा इनका योग्य रीति से सेवन करने पर अवश्य दीर्घ आयु प्राप्त होती है।

५—ओ३म् आयुषायुष्कृतां जीवा युष्मान् जीव मा मृथाः

प्राणेनात्मन्वतां जीव मा मृत्योरुदगावशम् ॥

अथर्व १६।२०।८

भावार्थ—अपने जन्म दिन को मनाते हुये मनमें यह दृढ़ संकल्प करें कि मैंने अकाल मृत्यु के वश में नहीं होना है। पुरुषार्थी तथा आत्मिक बल धारी अध्यात्मनिष्ठ सत्पुरुषों के समान स्व आयु को पुरुषार्थ द्वारा दीर्घ करना है। और अपनी पूर्ण आयु की समाप्ति तक सत्कर्म करता हुआ मैं आनन्द से रहूंगा। और प्रशस्त यश से युक्त होऊंगा।

६—ओ३म् सत्यामाशिषं कृणुता वयोधैः कीरिंचिद्ध्यवेथ स्वेभिरेवैः। पश्चामृधो अप भवन्तु विश्वास्तद् रोदसी शृणुतं विश्व मिन्वे ॥ अथर्व २०।६१।११

भावार्थ—हे विद्वानो आप लोग दीर्घायु के धारण करने के निमित्त सत्य यथार्थ आशीर्वाद प्रदान करो। आप लोग अपने ज्ञानों द्वारा अपने स्तुति कर्त्ता भक्त वा प्रेमी प्रियजन की सदा रक्षा करते हो। सब दुःख और विपत्तियां दूर हों। हे देवियो तथा भद्र पुरुषो आप मुझे वेद वचनों द्वारा शुभ शिक्षा दो।

तदुपरान्त सब नर नारी जाते समय यह आशीर्वाद देवें :—

हे त्वं······जीव शरदः शतं वर्द्धमानः। आयुष्मान् तेजस्वी वर्चस्वी श्रीमान् भूयाः ॥

गीत

प्रभु ऐसी कृपा कीजो, मैं दीर्घ जीवन को पाऊँ।
सतकर्मों में नित रत हों, मैं कर्मवीर कहलाऊँ॥
मानवता को फैलाऊँ दानवता दूर हटाऊँ।
दे सत्य ज्ञान की शिक्षा, इक प्रेम की गंगा बहाऊँ॥
जीवन में संयम लाकर, और अनाचार विनाश कर।
मैं, सदाचार फैलाकर, जीवन को सफल बनाऊं॥
करके दूर सब अविद्या, मैं सदा प्रसारूँ विद्या।
ले वेद ज्ञान की ज्योति, जग में प्रकाश फैलाऊँ॥
मेरे मन मन्दिर अन्दर, आवास हो तेरा प्रभुवर!
कर जोड़ पिता तुझसे मैं, वरदान यही इक चाहूं॥
मैं दीर्घ जीवन को पाऊँ, नित्य स्वजन्म दिन मनाऊँ।

ओ३मृप्रकाश 'आर्य'

प्रार्थना

ओ३म् आयुषे त्वा वर्चसे च बलाय च। यथा हिरण्य तेजसा विभासासि जनां अनु॥अथर्व १६।२६।३॥

हे सर्वशक्तिमान् प्रभो, हे सर्व मंगलप्रद ईश्वर, हे आनन्द मय भगवन्! आप की दया से हम आप के पवित्र वेद मन्त्रों द्वारा जो यह अग्निहोत्र कर रहे हैं, यह सुफल हो। हे तेजस्वी परमात्मन्! मैं आज स्वजन्म दिन पर आप से तेज, शक्ति और बल की प्रार्थना करता हूं। मैं आप से यह याचना करता हूं कि

मेरे भीतर पुरुषार्थ की मात्रा बढ़े। मैं अपमृत्यु के अधीन न होऊं! प्रभो! मेरे मन के भीतर यह पक्का विश्वास जम जावे कि आपकी आज्ञानुकूल धर्म कृत्यों को ही मैं सदा करता रहूं। मैं आदर्श जीवन व्यतीत करूँ। हे दयामय आपकी दया के स्रोत से एक घूँट मुझे भी मिल जावे केवल एक प्याली प्रेम की पान कर जाऊँ तो मेरा यह जीवन पवित्र हो जावे और आप के उज्ज्वल यश को दीर्घ काल तक गायन करता रहूं। हे दयालो! कृपा कीजो अनुग्रह करें।

॥ ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

वाक्‌दान (सगाई)

विधि—जिस समय लड़का न्यून से न्यून २४ वर्ष और कन्या न्यून से न्यून १६ वर्ष की हो उस समय इन दोनों को विवाह बन्धन में रखने के लिये जो वाक्‌दान अथवा सगाई करनी अभीष्ट हो और सगुन के रूप में देश काल अनुसार कुछ भेंट एक दूसरे को अर्पण की जावे; उस समय यह क्रिया करें। सबसे प्रथम ईश्वर स्तुति प्रार्थना उपासना स्वस्ति वाचन शांति पाठ करें। तत्पश्चात् हवन यज्ञ करें और निम्न मन्त्रों द्वारा विशेष आहुतियां देवें यदि हो सके तो कोई विद्वान् अथवा पुरोहित इनका भावार्थ सुना भी दिया करें।

वेद मन्त्र

१—ओ३म् ऋतमग्ने प्रथमं जज्ञे ऋते सत्यं प्रतिष्ठितम्।
यदियं कुमार्य्यभिजाता त दियमिह प्रतिपद्यताम्।
यत् सत्यं तद्दृश्यताम्॥

आश्व० गृ० सू० अ० १ कं० ५ सू० ५

भावार्थ—हे स्त्री व पुरुष! इस जगत् के पूर्व ऋत यथार्थ स्वरूप महत्तत्व उत्पन्न हुआ था और उस महत्तत्व में सत्य त्रिगुणात्मक नाश रहित प्रकृति प्रतिष्ठित है। जैसे पुरुष और प्रकृति के योग से सब विश्व उत्पन्न हुआ है वैसे मैं कुमारी और कुमार पुरुष इस समय दोनों में विवाह करने की, सत्य प्रतिज्ञा

करती व करता हूं उसकी यह कन्या और मैं वर प्राप्त होवें और अपनी प्रतिज्ञा को सत्य करने के लिये दृढ़ोत्साही रहें।

२—ओ३म् भगमस्या वर्च आदिष्यधिवृक्षादिव स्रजम्।
महाबुध्न इव पर्वतो ज्योक् पितृष्वास्ताम्॥

३—ओ३म् एषा ते राजन् कन्या वधूर्निधूयतां यम।
सा मातुर्बध्यतां गृहेऽथो भ्रातु रथो पितुः॥

४—ओ३म् एषा ते कुलपा राजन्तामु ते परिदद्मसि।
ज्योक् पितृष्वासाता आ शीर्ष्णः समोप्यात्॥

५—ओ३म् असितस्य ते ब्रह्मणा कश्यपस्य गयस्य च
अन्तः कोश मिव जामयोऽपि नह्यामि ते भगम्॥

अथर्व १।१४।१-४

भावार्थ—इन मन्त्रों में कन्या को उचित आयु पर उचित पात्र के हाथ में देने का उपदेश है। भावार्थ इन मन्त्रों का यह है। समावर्तन संस्कार के पश्चात् एक ब्रह्मचारी कन्या के माता पिता से प्रस्ताव करता है कि जिस प्रकार वृक्षों से पुष्प ले कर गले की माला बना ली जाती है। उसी भान्ति मैं ब्रह्मचारी इस कन्या के सौंदर्य और तेज को ग्रहण करके अपने आपको सजाना चाहता हूँ जिस प्रकार बड़ी जड़ वाला पर्वत अपने ही आधार पर स्थिर रहता है, उसी प्रकार कन्या भी स्व माता पिता के घर में विवाह काल पर्यन्त सुरक्षित रहे। दूसरे मन्त्र में कन्या के माता पिता वर के प्रस्ताव का अनुमोदन करते हैं और

कहते हैं कि हे राजन् (ज्ञान और ब्रह्मतेज से प्रकाशमान वर) यह हमारी कन्या तेरी बधू बन कर नियम पूर्वक व्यवहार करे। गृहस्थ का आनन्द ले। यह कन्या विवाह होने से पूर्व अपने माता पिता भाई के गृह पर रहे। हे व्रतधारिन् यह हमारी कन्या तेरे कुल का पालन करने वाली हो। तेरे लिये हम इसको समर्पण का संकल्प करते हैं। यह अपनी उत्तम बुद्धि से उत्तम विचारों का बीज बोवे। बन्धन रहित अर्थात् स्वतंत्र, द्रष्टा अपनी परिस्थिति का निरीक्षण करने वाले और ऐश्वर्यवान् आप वर के साथ इस कन्या के भाग्य का सम्बन्ध करते हैं। जिस प्रकार स्त्रियां अपने जेवर संदूक में बंद रखती हैं; उसी प्रकार इस कन्या का सौभाग्य सुरक्षित रहे।

६—ओ३म् तमस्मेरा युवतयो युवानं मर्मृज्यमानाः परियन्त्यापः। सशुक्रेभिः शिक्वभीरेव दस्मे दीदीयानिध्मो घृतनिर्णिगप्सु ॥ ऋ० २।३५।४

भावार्थ—जो उत्तम ब्रह्मचर्यव्रत और सद्विद्याओं से अत्यंत शुद्ध युवक और युवतियां परस्पर एक दूसरे को अच्छे प्रकार परीक्षा करके प्राप्त होती हैं। वह हृदय में प्रेम तथा आनन्द को प्राप्त हो कर गृहस्थ का उपभोग करने के लिये तत्पर होवें।

७—सोमो वधूयुरभवदश्विनास्तामुभावरा। सूर्यां यत् पत्ये शंसन्तीं मनसा सवितादात्। अ० १४।१।६

भावार्थ—सोम वधू की कामना करता था, मंगनी करने वाले अश्विनी देव थे सूर्या वधू का सूर्य पिता, अपनी पुत्री को वर [illegible]ाथ मन से दान करता है।

प्रार्थना

ओ३म् कया नश्चित्र आ भुवदूती सदावृधः सखा। कया शचिष्ठया वृता ॥ ऋ० ४।३१।१

भावार्थ—हे महान् प्रभु आपकी यह सृष्टि आश्चर्य मय है, आप सदैव हमारे कल्याण के लिये शुभ और मंगल अवसर प्रदान करते रहते हैं। आपकी ही इस आनन्द मय सृष्टि में दो जीवों का अर्थात् नर और नारी का मिलाप एक शुभ समय की ओर संकेत करता है। आप प्रभु सबसे श्रेष्ठ हैं अतः हम भी इस सम्बन्ध से सर्व श्रेष्ठ बनें। इस आह्लाद दायक शुभावसर पर हम सब स्त्री पुरुष इस परिवार के साथ हर्ष मनाते हुये इन की प्रसन्नता में सम्मिलित होते हैं। हे दयामय इस मंगलमय आनन्द युक्त समय की सफलता के लिये आपसे प्रार्थी हैं! हे प्रभु कुशल आनन्द हर्ष तथा कल्याण की ही वर्षा करो। ओ३म् शांतिः

गीत

सदा खुशी ही सदा हो मंगल सदा हो उत्सव यह शादियाना।
सदा ही स्वस्ति सदा ही शान्ति सदा सुफल यह यज्ञ रचाना ॥
सदा ही कीर्ति सदा ही लक्ष्मी, है बालक वृद्ध नौजवाना।
सदा ही तुष्टि सदा हो पुष्टि सदा हो बल पराक्रम बढ़ाना ॥
सदा हो आपस में प्रेम प्रीति, दो कुलों का परस्पर मिल जाना ॥

वर गुण सूचक शब्द

१. यम=Self Controller, आत्म संयमी धर्मात्मा, यम नियमों का पालने वाला।

२. राजन्=Melodious, मधुर राजा धर्मपत्नी को प्रसन्न करने वाला।

३. असित:=Self Supporter, बारोज़गार, स्वतंत्र, बंधन रहित।

४. कश्यप:=Dutiful, परिस्थिति को जानने वाला, कर्त्तव्य परायण।

५. गय:=Healthy, नीरोग, बलवान् प्राण बल युक्त।

६. ब्रह्मणा युक्त:=Educated, विद्वान् ज्ञानी।

वधू गुण सूचक गुण

कुलपा:=कुल मर्यादा पालन करने वाली यश वर्धक।

भगं=पति का भाग्य बढ़ाने वाली। मन्त्री तुल्य परामर्श दात्री।

कन्या=रूपवती, तेजस्विनी, आकर्षिका।

वधू=पति गृह इच्छुक।

पितृषुआस्ताम्=माता पिता अथवा पति के गृह पर ही काम करने वाली।

वृक्षात् स्रक्=पुष्प सदृश सुगंधित कोमलांगी।

मिलनी

विवाह संस्कार के विषय में महर्षि दयानन्द जी ने अपनी संस्कार विधि में बड़ी उत्तम विधि लिखी है। किन्तु विवाह के उपलक्ष्य में कई लोकाचार की बातें भी हमारे भीतर विराजमान हैं जो कि एक संगठन सूत्र में यदि पिरो दी जावें; तो अच्छा होगा। विवाह से पूर्व भी मिलनी की रीति एक लोकाचार है। परन्तु इस सुन्दर और मंगलमय समय को भी यदि हम सुन्दर वेद मन्त्रों द्वारा सुशोभित कर लें तो अत्युत्तम रहेगा। मिलनी एक प्रकार का परिचय कराना है। अर्थात् दोनों कुलों को परस्पर Introduction परिचय हो जावे।

विधि

सबसे प्रथम जिस समय वर अपने स्थान पर संस्कार विधि लिखित अनुसार उत्तम वस्त्रालङ्कार करके यज्ञ शाला में विधि पूर्वक हवन यज्ञ करके वधू के गृह को जाने की तैयारी करे। तो कन्या पक्ष वाले लोग वर आदि का सन्मान करें। उस समय कन्या के गृह द्वार पर स्वागत किया जावे। गीत जो इस विधि के अंत में है, वह गाया जावे। निम्न वेदमन्त्र का पाठ किया जावे और यदि कोई विद्वान् समयानुसार भावार्थ भी सुना दें तो अच्छा प्रभाव रहेगा।

१—ओ३म् आगच्छत आगतस्य नाम गृहमास्यायतः।

इन्द्रस्य वृत्रघ्नो वन्वे वासवस्य शतक्रतोः ॥

अथर्व ६।८२।१

२—ओ३म् आ नो अग्ने सुमतिं संभलो गमेदिमां कुमारीं सह नो भगेन। जुष्टा वरेषु समनेषु वल्गुरोपं पत्या सौभगमस्त्वस्यै ॥ अथर्व २।३६।१

३—ओ३म् आक्रन्दय धनपते वरमामनसं कृणु। सर्वं प्रदक्षिणं कृणु यो वरः प्रतिकाम्यः ॥ अथर्व ८।३६।६

भावार्थ—विवाह करने वाले वर का स्वागत करते हुये कन्या पक्ष के लोग बराती पुरुषों को कहें। हे योग्य पुरुषो! आओ विराजो मैं आप का हार्दिक स्वागत करता हूं। आप सब के सामने मैं अपनी कन्या के लिये इस योग्य वर.........का नाम उच्चारण करता हूं। जो धन और ऐश्वर्य का स्वामी है। प्रभु और आप लोगों के सहयोग से सब विघ्न नष्ट हों और यह यज्ञ सफल हो।

हे ज्ञान वाले विशेष विद्वान् वर! हमारी इस अच्छी बुद्धि वाली कन्या को यश के साथ आ कर प्राप्त हो। मेरी यह कन्या तुझ पति के साथ सौभाग्य को प्राप्त हो हम वर और आप सब लोगों की प्रतिष्ठा, आदर सत्कार से स्वागत करते हैं। अन्त में सब उपस्थित नर नारी ओ३म् स्वस्ति! ओ३म् स्वस्ति!! ओ३म् स्वस्ति का उच्चारण करें।

गीत

सज्जनां दे दर्शन करके असी निहाल होये।
मिलनी दे चाव अन्दर सारे खुशहाल होये॥
धन्य २ हैं भाग्य हमारे मिल गये हैं सज्जन प्यारे।
गावन मिल मंगल सारे, भगवन् दयाल होये।
प्यारा शुभावसर आया, सब ने मिल मंगल गाया।
ईश्वर ने मेल मिलाया, दर्शन कमाल होय॥
वेला है मंगलकारी, खुश हैं सब नर ते नारी।
मिलनी शुभ प्यारी प्यारी, सज्जन कृपाल होये॥
आशाएं पूरी होईं, प्रसन्न है हर कोई।
दर्शन परस्पर करके खुश वृद्ध बाल होये।

प्रार्थना

ओ३म् आनन्दा मोदाः प्रमुदोऽभीमोद मुदश्च ये।
उच्छिष्टाज्जज्ञिरे सर्वे दिवि देवा दिविश्रतः॥
॥अ० ११।७।२६॥

हे आनन्दमय प्रभु आप की ही कृपा से यह शुभावसर आया है। आप ही से आह्लाद, प्रसन्नता आदि उत्पन्न हुये हैं। आप की दया से दो कुलों का यह समागम हुआ है। हे निरंजन आप कृपया ऐसा आशीर्वाद दीजिये जिससे हम सब एक प्रेम सूत्र में सुदृढ़ रहें और आप का यश गायन करते हुये इस मंगलमय यज्ञ की पूर्णता के इच्छुक हैं। प्रभु ऐसा अनुग्रह करो कि यह वर वधू परस्पर विश्वास, प्रेम की मूर्ति बन कर एक आदर्श गृहाश्रम बसायें। ॥ ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

व्यापार सूत्र पद्धति

जब कोई भाई अपनी दुकान कारखाना अथवा कोई अन्य शिल्पाश्रम आदि व्यापार सम्बन्धी कार्य आरम्भ करना चाहे तो निम्न विधि से यह कार्य करें—

विधि

सब से प्रथम ईश्वर प्रार्थना, स्वस्ति वाचन शान्तिपाठ आदि करके सामान्य प्रकरण की क्रिया करें। तत्पश्चात् निम्न वेद मन्त्रों द्वारा यज्ञ कुण्ड में आहुतियां देवें और विद्वान् अथवा पुरोहित यथासमय इनका भावार्थ भी समझा दें।

१—ओ३म् इन्द्र महं वणिजं चोदयामि स न ऐतु पुर एता नो अस्तु। तुदन्नरातिं परिपन्थिनं मृगं स ईशानां धनदा अस्तु मह्यम्॥

२—ये पन्थानो बहवो देवयाना अन्तरा द्यावापृथिवी संचरन्ति। ते मा जुषन्तां पयसा घृतेन यथा क्रीत्वा धनमाहराणि॥

३—इध्मेनाग्न इच्छमानो घृतेन जुहोमि हव्यं तरसे बलाय यावदीशे ब्रह्मणा वन्दमान इमां धियं शतसेयाय देवीम्।

४—इमामग्ने शरणिं मीमृषो नो यमध्वानमगाम दूरम्। शुनं नो अस्तु प्रपणो विक्रयश्च प्रतिपणः फलिनं

मा कृणोतु। इदं हव्यं संविदानो जुषेथां शुनं नो अस्तु चरित मुत्थितं च।

५—येन धनेन प्रपणं चरामि धनेन देवा धनमिच्छमानः। तन्मे भूयो भवतु मा कनीयोग्ने सातघ्नो देवान् हविषा निषेध॥

६—येन धनेन प्रपणं चरामि धनेन देवा धन मिच्छमानः। तस्मिन् मइन्द्रो रुचिमा दधातु प्रजापतिः सविता सोमो अग्निः॥ अथर्व ३।१५

भावार्थ—(१) मैं व्यापार करने वाला इन्द्र (ऐश्वर्यशाली धनी) की प्रार्थना करता हूं। कि वह हमारे इस व्यापार सम्बन्धी व्यवहार का अग्रगामी बने। वह प्रभु हमें धन देने वाला हो। और वह हमारे शत्रुओं को अर्थात् व्यापार के मार्ग में विघ्न डालने वाले, लुटेरे डाकू आदि को हमारे से दूर करे।

(२) जल स्थल और आकाश में रथ, जहाज और विमानादि द्वारा आने जाने के मार्गों में हमें खान पान के भरपूर पदार्थ प्राप्त हों और मैं दूर देश में जाकर बहुत से पदार्थ खरीद कर बहुत सा धन स्वदेश में ले आऊं।

(३) हे ज्ञान स्वरूप परमात्मा! मैं लाभ की इच्छा करने वाला समिधा तथा घृत द्वारा संकट से बचने के लिये और बल प्राप्ति के लिये हवन करता हूं। इससे मैं ज्ञान प्राप्ति पूर्वक उत्तम बुद्धि से अनेक व्यापारिक सिद्धियां प्राप्त करूं।

(४) अपने घर से बहुत दूर विदेश में चले जाने पर वहां के

किसी आढ़ती (मध्यस्थ) द्वारा व्यापार करना ही उचित है। इसलिये इस मन्त्र में कहा है कि हे साक्षिन् (जामिन) दोनों के बीच में मध्यस्थ पुरुष ही हमारे कष्टों को निवारण करे। हमारे व्यापार में विशेष लाभ हो। हमें क्रय विक्रय दोनों में लाभ हो। प्रत्येक सौदा (व्यवहार) मुझे लाभदायक हो। आढ़ती को दलाल उत्तर देता है। कि हे व्यापारियो तुम दोनों इस लेन देन के सौदे में खूब अच्छी प्रकार से सोच विचार करके कार्य करो। हमारा यह चलान किया गया, माल तुम्हें लाभप्रद (सुखकारी) हो।

(५) मैं मूलधन से व्यापार करके बहुत लाभ प्राप्त करना चाहता हूं। इसलिये जिस धन से यह लेन देन का व्यवहार करता हूं। वह धन मेरे कार्य के लिये पर्याप्त होवे। कम न होवे। हे साक्षिन् राजन् (या आढ़ती) इस व्यापार के अन्दर जो रुकावटें हों इनको दूर करो।

(६) हे अधिकारी वर्ग शासको। अपने इस मूल धन से और अधिक धन की प्राप्ति करने की इच्छा करता हुआ मैं जिस धन से व्यापार करता हूं उससे प्रभु मेरे उत्साह को बढ़ावे। ताकि मैं दिन प्रति दिन सर्वोत्पादक प्रभु की उपासना करता रहूं। वही मेरा प्रेरक है।

उपर्युक्त भावार्थ से व्यापार करने के निम्न साधन अपेक्षित हैं।

(१) मूलधन=सरमाया Capital.

(२) लाभ=तथा Profit का व्यापार पूरा २ हो।

(३) धनदा=धनपति साहुकार अथवा आढ़ती।

(४) सौदा=क्रय विक्रय।

(५) उत्थितं=कमीशन।

प्रार्थना

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः। एवंत्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे ॥यजु०।४०.२॥

हे ईश्वर आप अत्यन्त पुरुषार्थ शील हैं। आप के ही तप से यह सर्व अव्यक्त जगत व्यक्त रूप में आया। आपने ही वेद में हमें यह उपदेश दिया है कि हम कार्यशील बनें। स्व-कर्त्तव्य का सदैव पालन करना अपना धर्म समझें। आज हम जिस व्यापार कार्य का प्रारम्भ करने लगे हैं यह सब पुरुषार्थ के ही आधीन है अतः आप से आशीर्वाद चाहते हैं कि हे दयालु प्रभो! हमें ऐसी सद्बुद्धि दो कि हम सर्वदा पुरुषार्थ ही करते रहें और अपने इस कार्य में सफल हों। क्योंकि कर्त्तव्य न करते हुये कभी किसी की उन्नति नहीं हो सकती। हे प्रभो कृपा करो और सफलता प्राप्त हो यही प्रार्थना है।

॥ ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

अन्तिम शोक दिवस

आज कल प्रायः हम यह देखते हैं कि जब किसी के यहां कभी किसी सम्बन्धी की मृत्यु हो जावे तो अन्त्येष्टि क्रिया के पश्चात् अस्थि संचय तथा अन्तिम शोक दिवस (चाहे वह चौथे दिन अथवा ग्यारहवें वा तेरहवें दिन हो) अवश्य मनाया जाता है। यद्यपि ऋषि दयानन्द ने अपनी संस्कार विधि में स्पष्टतया यह उल्लेख कर दिया है कि अन्त्येष्टि क्रिया के पश्चात् मृतक के लिये कुछ भी कर्म कर्तव्य नहीं है परन्तु यह भी एक सामाजिक पद्धति ही है अतः इसको भी संगठित रूप से मनाने की योजना बना दी गई है।

विधि—जिस दिन यह शोक दिवस मनाना हो उस दिन ईश्वर प्रार्थना, स्वस्तिवाचन तथा शान्तिपाठ आदि सामान्य क्रिया करके हवन यज्ञ करें और पुनः निम्न वेद मन्त्रों से आहुति दी जावे। पुरोहित अथवा कोई विद्वान् पुरुष यदि इनका भावार्थ भी सुना दें तो अत्युत्तम रहेगा। (पूज्य महात्मा नारायण स्वामी जी कृत "मृत्यु और परलोक" पुस्तक से भी कुछ सुनाया जा सकता है)।

वेद मन्त्राः

१—वायुरनिलममृतमथेदं भस्मान्त ँ शरीरम्। ओ३म् क्रतो ! स्मर क्लिवेस्मर कृत ँ स्मर।यजु०४०।१५॥

हे धर्म करने वाले जीव तू शरीर छूटते समय ओ३म् नाम ईश्वर का स्मरण कर। अपने सामर्थ्य से ईश्वर के स्वरूप का स्मरण कर। यह शरीर का अन्त भस्म होने वाली ही वस्तु है। (भावार्थ महर्षि दयानन्द यजुर्वेद भाष्य) मनुष्यों को चाहिये कि जैसे मृत्यु समय में चित्त की वृत्ति होती है, और शरीर से आत्मा का पृथक होना होता है। वैसे ही इस शरीर को जलाने का प्रयत्न किया करें।

२—ओ३म् प्रजापतिः सम्भ्रियमाणः सम्राट् सम्भृतो वैश्व देवः स ँ सन्नो घर्मः प्रवृक्तस्तेज उद्यत आश्विनः पयस्यानीयमाने पौष्णो विष्यन्दमाने मारुतः क्लथन्। मैत्रः शरपि सन्ताय्यमाने वायव्यो ह्रियमाण आग्नेयो हूयमानो वाग्घुतः॥
यजु० ३६।५॥

(भावार्थ महर्षि दयानन्द) जब यह जीव शरीर को छोड़ सब पृथिव्यादि पदार्थों में भ्रमण करता जहां तहां प्रवेश करता और इधर उधर जाता हुआ कर्मानुसार ईश्वर की व्यवस्था से जन्म पाता है तभी सुप्रसिद्ध होता है।

३—सविता प्रथमेऽहन्नग्निर्द्वितीये वायुस्तृतीय आदित्यश्चतुर्थे चन्द्रमाः पञ्चम ऋतुः षष्ठे मरुतः सप्तमे बृहस्पतिरष्टमे। मित्रो नवमे वरुणो दशम इंद्र एकादशे विश्वे देवा द्वादशे॥ यजु० ३६।३

(भावार्थ महर्षि दयानन्द) हे मनुष्यो ! जब ये जीव शरीर को छोड़ते हैं। तब सूर्य प्रकाश आदि पदार्थों को प्राप्त हो कर

कुछ काल भ्रमण कर अपने कार्यों के अनुकूल गर्भाशय को प्राप्त हो शरीर धारण कर उत्पन्न होते हैं तभी पुण्य पाप कर्म से सुख दुःख रूप फलों को मांगते हैं।

४—उदह्वमायु रायुषे क्रत्वे दक्षाय जीवसे। स्वान् गच्छतु ते मनो अधा पितृं रूपद्रव ॥ अथर्व १८।२।२३

हे मृतात्मा ! तू दीर्घायु बल, जीवनादि धारण करने के लिये पुनः इस ससार में आ।

५—ओ३म् ये चित्पूर्वं ऋतसाप ऋतावान ऋतावृधः पितृन्तपस्वतो यम तांश्चिदेवापि गच्छतात् ॥

ऋ० ६।१५४।४

भावार्थ—जो पितर सत्य के रक्षक, यज्ञादि का अनुष्ठान नित्य नियम पूर्वक करने वाले हैं और तपस्वी है ऐसे लोकों को ईश कृपा से 'हे जीव' तू प्राप्त हो और तेरी सद्गति हो। अथवा ज्ञानी विद्वान् ब्राह्मण, शूरवीर न्यायकारी क्षत्री तथा धन से वृद्धि करने वाले व्यापारी महानुभाव और परिश्रमी जन के साथ भी धर्म ही जाता है।

६—सहस्रणीथाः कवयो ये गोपायन्ति सूर्यम्। ऋषीन्तपस्वतो यम तपोजां अपिगच्छतात् ॥ ऋ०१।१५४।५

भावार्थ—जो क्रान्त दर्शी ऋषिगण नाना प्रकार के विद्वानों से परि पूर्ण हैं ऐसे योगाभ्यासी तपस्वी ऋषियों के लोक का तू प्रेतात्मा प्राप्त हो अर्थात् ईश्वर कृपा से सुकृत लोकों में जा और निकृष्ट लोक में मत जा।

वैराग्य गीत

जिन्दगी दा नहीं एतबार जी बैठ प्रभु गुण गालो ॥
पल पल करके बीती जावे, बीत गई फिर हाथ न आवे ।
कर ले तू प्रभु से प्यार······ ॥
बतलावो कहां राम वा लक्ष्मण, नजर न आवे योधा अर्जुन ।
गये सब स्वर्ग सिधार······ ॥
यह जग जानो मुसाफिर खाना, रात कटी का जानो टिकाना ।
देखो तो सोच विचार······ ॥
मौत का वेला कोई न जाने, हार गये सब लोक सयाने ।
नाम प्रभु न विसार······ ॥
यह जग रहन ठिकाना नाहीं, मरघट भूमी असल पनाही ।
चाहे हो सरकार······ ॥
पर उपकार करले मेरे भाइयो, कर्म धर्म का सागर लइयो ।
जीत लीजो यम द्वार······ ॥
धर्म का वीर कहे सुख पावो, नाम प्रभु का ना
बिसरावो । हो जावोगे पार··· ॥

॥ ओ३म् ॥

विभक्तारꣳ हवामहे वसोश्चित्रस्यराधसः। सवितारं नृचक्षसम् ॥ यजु० अ० ३०

अर्थ—हे ईश्वर तू ही कर्मानुसार जीवात्माओं की आयु जाति और भोग का विभाग करने वाला है और तू ही इस सृष्टि की उत्पत्ति स्थिति और प्रलय करने वाले हो; और सब मनुष्यों के शुभ अशुभ दोनों प्रकार के कर्मों का द्रष्टा है।

हे जगन्नियन्तः यद्यपि आप सब प्राणियों के भले बुरे जैसे भी प्राणी कर्म करता है उन सब को यथावत् जानते हैं और उनके कर्मानुसार ही आप जाति आयु और भोग प्रदान करते हैं तथापि हम मोह के पाश में बन्धे हुए इस मृत व्यक्ति के लिए कल्याण की भावना रखते हैं अतः आपसे सानुनय प्रार्थना करते हैं कि आप इस मृतक के आत्मा को सद्गति प्रदान करने की कृपा करें जिससे यह जन्मान्तर में उत्तम जाति आयु और भोग प्राप्त कर सके और इनके वियोग से इन का जो शोक सन्तप्त परिवार है उसे धैर्य और शान्ति प्रदान करें यह ही हमारी आपसे प्रार्थना है। आशा है हमारी यह प्रार्थना निष्फल न जावेगी।

पाक्षिक यज्ञ

महर्षि दयानन्द ने संस्कार विधि में निम्न मन्त्र अमावस्या तथा पौर्णमासी के दिन यज्ञ करने के निमित्त लिखे हैं—

अमावस्या

ओ३म् अग्नये स्वाहा। ओं इन्द्राग्नीभ्यां स्वाहा। ओ३म् विष्णवे स्वाहा॥

पौर्णमासी

ओ३म् अग्नये स्वाहा। ओं अग्नीषोमाभ्यां स्वाहा। ओ३म् विष्णवे स्वाहा। पुनः ओ३म् भूरग्नये स्वाहा। इदमग्नये इदन्नमम। ओ३म् भुवर्वायवे स्वाहा। इदं वायवे इदन्न मम। ओ३म् स्वरादित्याय स्वाहा। इदमादित्याय इदन्नमम॥

वेद का स्वाध्याय करते हुये मुझे अथर्व वेद में दो सूक्त इस पाक्षिक यज्ञ के लिये मिले हैं। आशा है कि मेरे आर्य भाई अमावस्या और पूर्णिमा के दिन उपरोक्त मन्त्रों से आहुति देने के पश्चात् निम्न मन्त्रों से भी आहुतियां देंगे।

अमावस्या

ओ३म् यत् ते देवा अकृण्वन् भागधेयममावास्ये

संवसन्तो महित्वा तेना नो यज्ञं पिपृहि विश्ववारे रयिं नो धेहि सुभगे सुवीरम् ॥अथर्ववेद ७।७९॥

अर्थ—हे अमावास्ये (ते महित्वा) तेरे महत्त्व से (संवसन्तः देवाः) एक स्थान से दूसरे स्थान पर निवास करने वाले देव (यत् भागधेयं अकृण्वन्) जो भाग्य बनाते हैं (तेन नः यज्ञं पिपृहि) उससे हमारे यज्ञ को पूर्ण कर। हे (विश्ववारे सुभगे) सब को वरने योग्य उत्तम भाग्यवती देवी (सुवीरं रयिं नः धेहि) उत्तम बल युक्त धन हमें दो ॥१॥

ओ३म् अहमेवास्म्यमावास्या३मामा वसन्ति सुकृतो मयीमे। मयिदेवा उभये साध्याश्चेन्द्र ज्येष्ठाः समगच्छन्त सर्वे ॥ अथर्ववेद ॥२॥

अर्थ—(अहं एव अमावास्या अस्मि) मैं ही अमावस्या हूँ। (मा इमे सुकृतः मयि आवसन्ति) मेरी इच्छा करते हुये ये पुण्य करने वाले लोग मेरे आश्रय से रहते हैं। (साध्याः इन्द्रज्येष्ठा सर्वे उभये देवाः) साध्य और इन्द्र आदि सब दोनों प्रकार के देव (ज्ञानी और कर्मशील) (मयिसमगच्छन्त) मुझमें आकर मिलते हैं।

ओ३म् आगन् रात्री सङ्गमनी वसूना मूर्जं पुष्टं वस्वा वेशयन्ती। अमावास्यायै हविषा विधेमोर्जं दुहाना पयसा न आगन् ॥३॥

अर्थ—सब वसुओं को मिलाने वाली (पुष्टं ऊर्जं वसु

आवेशयन्ती) पुष्टिकारक और बलवर्धक धन देने वाली रात्री आ गई है। (अमावस्यायै हविषा विधेम) अमावस्या के लिये इस हवन से यजन करते हैं क्योंकि हम (ऊर्जं दुहाना पयसा नः आगन्)अन्न देने वाली दूध के पुष्टिकारक पदार्थों के साथ हमें प्राप्त हो।

अमावास्ये न त्वदेतान्यन्यो विश्वा रूपाणि परिभूर्ज जान। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥ अथ० ६।७६।४॥

हे अमावस्ये (त्वत अन्यः एतानि विश्वा रूपाणि) तेरे से भिन्न इन सब रूपों को (परिभूः न जजान) घेर कर कोई नहीं बना सकता। (यत्कामाः ते जुहुमः) जो कामना करते हुये हम तेरा यजन करते हैं (तत् नः अस्तु) वह हमें प्राप्त होवे।

अमावास्या का अर्थ (एकत्र वास कराने वाली। सूर्य और चन्द्र एक स्थान पर रहते हैं अतः इस तिथि को अमावस्या कहते हैं। सूर्य उग्र रूप और चन्द्र शान्त रूप है। विभिन्न प्रकृति वाले दम्पति एक गृह में कैसे निवास करें। हमें यह शिक्षा इस सूक्त से मिलती है। उस दिन दूधादि सात्विक पदार्थों से हवन यज्ञ करना चाहिये।

पूर्णिमा

ओ३म् पूर्णा पश्चादुत पूर्णा पुरस्तादुन्मध्यतः पौर्ण-

मासी जिगाय तस्यां देवैः संवसन्तो महित्वा नाकस्य पृष्ठे समिषा मदेम ॥ अथर्व ७।८०।१ ॥

(पश्चात्) पीछे से परिपूर्ण (उत पुरस्तात् पूर्णा) और आगे से भी पूर्ण (मध्यतः) बीच में से भी परिपूर्ण (पौर्णमासी उत जिगाय) पूर्णिमा हुई है। (तस्यां देवैः संवसन्तः) उसमें देवों के साथ रहते हुये हम सब (महित्वा नाकस्य पृष्ठे इषा संमदेम) महिमा से स्वर्ग के पृष्ठ पर इच्छा के अनुसार आनन्द का उपभोग करें। अर्थात् पौर्णमासी को यज्ञ करने वाले सुखी होते हैं।

वृषभं वाजिनं वयं पौर्णमासं यजामहे। स नो ददात्व क्षितां रयिमनु पदस्वतीम् ॥२॥

अर्थ (वृषभं वाजिनं पौर्णमासं) बलवान् अन्नवान् पौर्णमास (वयं यजामहे) हम यजन करते हैं (सनः अक्षितां अनु उपदस्वती रयिं ददातु) वह हम सबको अक्षय और अविनाशी धन देवे।

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा रूपाणि परिभूर्जजान। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् ।३। ॥अथर्व ७।८०।३॥

हे प्रजापते तेरे से भिन्न इन सम्पूर्ण रूपों को सर्व व्यापक सर्व सामर्थ्यवान् होकर कोई नहीं उत्पन्न कर सकता। जिस कामना से प्रेरित होकर हम तेरा "यजन" करते हैं। वह हमें प्राप्त हो। हम सब धनों के पालक हों।

पौर्णमासी प्रथमा यज्ञियासीदह्नां रात्रीणामतिशर्वरेषु ।
ये त्वां यज्ञैर्यज्ञिये अर्द्धयन्त्यमी ते नाके सुकृतः प्रविष्टाः ।४

॥अथर्व ७।८०।४॥

अर्थ—(पौर्णमासी) पूर्णिमा (अह्नां रात्रीणां अति शर्वरेषु) दिनों में तथा रात्रियों के अंधकार में (प्रथमा यज्ञा आसीत्) प्रथम पूजनीय है (यज्ञिये) पूजनीय (ये त्वां यज्ञैः अर्धयन्ति) जो तुम्हें यज्ञ के द्वारा पूजते हैं (ते अमी सुकृतः नाके प्रविष्टाः वे ये सत्कर्म करने वाले स्वर्ग के पीठ पर प्रविष्ट होते हैं।

यह दोनों सूक्त दर्शपौर्णमासेष्टि यज्ञ के हैं। आर्य गण इस पर मनन करें।

शुद्धि-पत्र

अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति
न्वाय	न्याय	१	१२
अग्रर्णा	अग्रणी	४२	५
पोषम् के आगे -	पोषं स्वाहा इदमग्नये पवमानाय इदन्नमम	४२	५
मा भृथाः	मा मृधाः	५४	२१
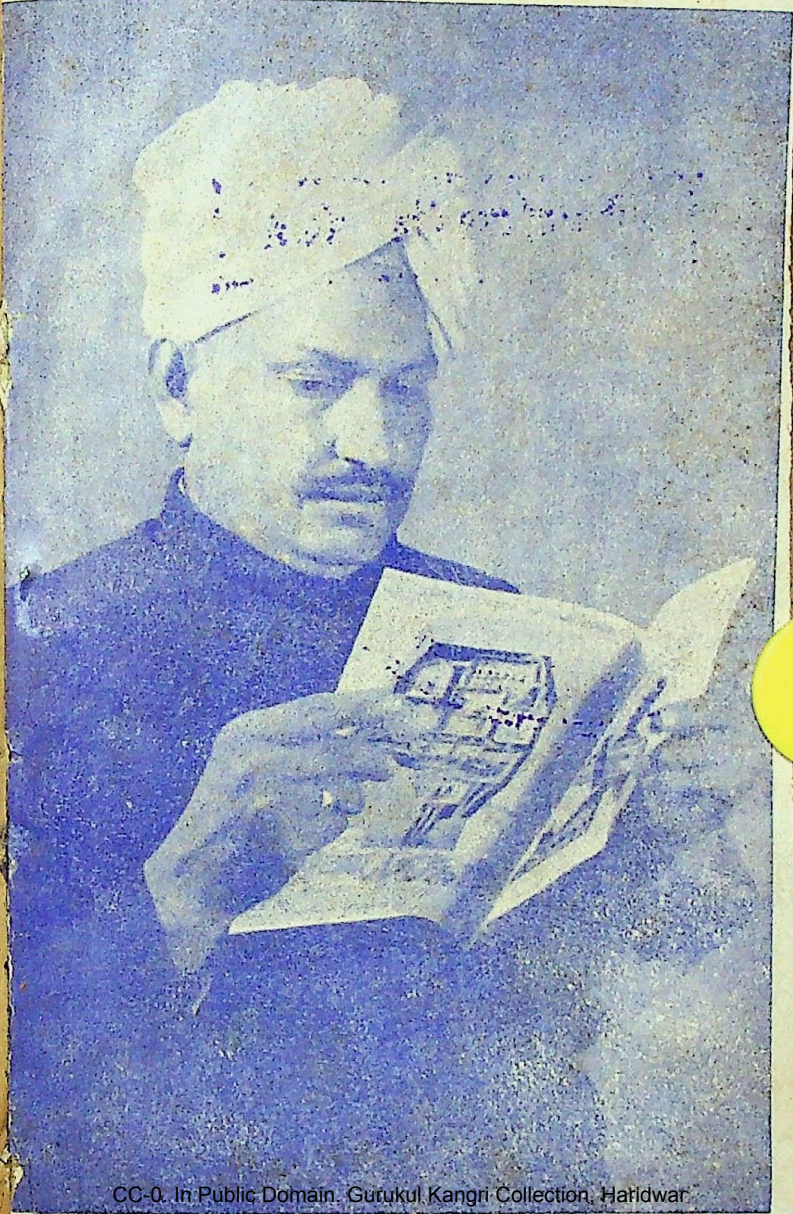
॥ ओ३म् ॥

आर्य समाज के नियम

—*❀*—

१—सब सत्यविद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सब का आदि मूल परमेश्वर है।

२—ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान् न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य पवित्र और सृष्टिकर्ता है, उसी की उपासना करनी योग्य है।

३—वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

४—सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये।

५—सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करनेचाहियें।

६—संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

७—सब से प्रीति पूर्वक यथा योग्य, धर्मानुसार वर्तना चाहिये।

८—अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये।

९—प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिये किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये।

१०—सब मनुष्यों को सामाजिक, सर्व हितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिये और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।